बीपीएससी मुख्य परीक्षा

निबंध संग्रह

निबंध प्रश्न-पत्र के नवीनतम पैटर्न पर आधारित

निबंधों का विषय-वार संग्रह, बीपीएससी मुख्य परीक्षा (68वीं एवं 70वीं) में पूछे गए निबंधों के साथ

- बिहार की लोक कहावतों पर आधारित निबंध
- भारतीय समाज, संस्कृति एवं मूल्य
- सामाजिक न्याय
- महिला सशक्तीकरण
- आर्थिक विकास
- ग्रामीण विकास
- शिक्षा एवं स्वास्थ्य
- लोकतंत्र एवं शासन
- मीडिया एवं समाज
- अधिकार एवं कर्तव्य
- राष्ट्रीय सुरक्षा
- वैश्वीकरण
- सतत विकास एवं नवीकरणीय ऊर्जा
- प्रौद्योगिकी विकास
- जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण
- नैतिक एवं दार्शनिक निबंध

CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

बीपीएससी मुख्य परीक्षा

निबंध संग्रह

निबंध प्रश्न-पत्र के नवीनतम पैटर्न पर आधारित

- यह पुस्तक बिहार लोक सेवा आयोग (BPSC) द्वारा आयोजित एकीकृत संयुक्त प्रतियोगी (मुख्य) परीक्षा के निबंध प्रश्न-पत्र की तैयारी करने वाले प्रतियोगी अभ्यर्थियों के लिए तैयार की गई है, जिसमें नवीनतम परीक्षा पैटर्न को आधार बनाया गया है।
- इसमें बीपीएससी के निबंध प्रश्न-पत्र में पूछे जाने वाले "बिहार की लोक कहावतों एवं लोकोक्तियों पर आधारित महत्वपूर्ण निबंधों" को भी शामिल किया गया है।
- पुस्तक में 68वीं और 70वीं बीपीएससी मुख्य परीक्षा में पूछे गए निबंधों को भी समाहित किया गया है, जो इस प्रश्न-पत्र की तैयारी में अभ्यर्थियों को बहुमूल्य अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकते हैं।

संपादक
एन. एन. ओझा

लेखन
क्रॉनिकल संपादकीय समूह

CHRONICLE
Nurturing Talent Since 1990

अनुक्रमणिका

- *70वीं BPSC मुख्य परीक्षा* *1-14*

बीपीएससी द्वारा पूछे जाने वाली सभी विषय-वस्तुओं पर आधारित वर्गीकरण

बिहार की लोक कहावतों पर आधारित निबंध

1. अनेर धुनेर के राम रखवार................................2
2. आगु नाथ नै पाछू पगहा, बिना छान के कूदे गधा....3
3. बिन समाज के बोली हो सकेला का, बिन बोली (भाषा) समाज हो सकेला का 4
4. धोबियक कुकुर ने घर के ने घाट के.................5
5. धर्म के बिना विज्ञान नांगर छै, विज्ञान के बिना धर्म आन्हर छै...6
6. पानी में मछरिया, नौ-नौ कुटिया बखरा................7
7. अगिला खेती आगे-आगे, पछिला खेती भागे जागे....8
8. मूस मोटइहें, लोढ़ा होइहें, ना हाथी, ना घोड़ा होइहें...9
9. गोदी में लड़िका, भर गाँव ढिंढोरा.....................10
10. अन्हा गांव में कन्हा राजा 11
11. अनकर धान पाबी त अस्सी मौन तौलाबि..........12
12. चलय नय आबय त अंगना टेड़.......................13
13. चालनि दूसलैन सूप के जिनका सहस्त्र टा छेद....14
14. बानर का हाथे नारियर.....................................15
15. भुसकौल विद्यार्थी के गत्ता मोट.........................16
16. हरबरी बियाह, कनपट्टी सेनुर 17
17. ककरो बोरे-बोरे नून, ककरो रोटियो पर आफत..18
18. अपना घरे बिलइओ बाघ 19
19. पैसा नय कौड़ी आ बीच बजार में दौड़ा-दौड़ी...20
20. हर बहय से खर खाय, बकरी खाय अचार........21
21. जहाँ गाछ ना बिरिछ उहाँ रेड़ परधान 22
22. अन्हरा का आगा रोअल आपन दीदा खोअल......23
23. मूर्खक लाठी, बिच्चे कपार 24
24. राजा दु:खी प्रजा दु:खी, जोगी के दु:ख दूना......25
25. बहिरा नाचे अपने ताले 26
26. सब धान बाइसे पसेरी.....................................27
27. चोर न सहे अँजोर 28
28. हम चराबी दिल्ली-दिल्ली, आ हमरा चरबय घरक बिल्ली...29
29. चिरई के जान जाय, लइका के खिलौना...........30
30. सरलौ भुन्ना त रहू के दुन्ना.............................31

भारतीय समाज, संस्कृति एवं मूल्य

1. आध्यात्मिक उन्नति तथा शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए योग की आवश्यकता और महत्व...34
2. साहित्य ज्ञान का केवल एक स्रोत ही नहीं है, बल्कि यह नैतिक और सामाजिक क्रिया का भी एक रूप है।..35
3. भारतीय संस्कृति ने वैश्विक विचार और प्रथाओं को किस प्रकार प्रभावित किया है?..................36
4. भारतीय समाज को आकार देने में भारतीय सिनेमा की भूमिका...37
5. भारतीय दर्शन: सत्य एवं आत्मज्ञान की खोज.....38
6. क्या हम सभ्यता के पतन की राह पर हैं?.........39
7. आधुनिक जटिल समाज न्याय के विभेदीकृत सिद्धांतों की मांग करता है..............................41
8. क्या समाज में व्याप्त असहिष्णुता मॉब लिंचिंग का कारण है?..43

सामाजिक न्याय

1. भारत में दहेज प्रथा विरोधी कानून और उनकी प्रभावशीलता 46
2. क्या प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम, 1994 कन्या भ्रूण हत्या से निपटने में प्रभावी है?.........47
3. भारत में बाल विवाह की व्यापक समस्या.........48
4. घरेलू हिंसा: एक बड़ी सामाजिक चुनौती...........49
5. भारत में वंचितों के लिए सार्वभौमिक न्यूनतम आय...50
6. बच्चों के प्रति बढ़ती हिंसा: समाज की गिरती नैतिकता का प्रतिबिंब.......................................51

महिला सशक्तीकरण

1. महिला सशक्तीकरण की वर्तमान स्थिति: राजनैतिक सशक्तीकरण के परिप्रेक्ष्य में 54
2. भारत में महिला उद्यमिता: एक उभरती हुई प्रवृत्ति...55
3. सार्वजनिक नीति निर्माण में महिलाओं की भागीदारी की आवश्यकता...56
4. स्त्री पैदा नहीं होती, बल्कि बना दी जाती हैं.....58
5. समाज में लैंगिक रूढ़िबद्धता की समस्या एवं मीडिया की भूमिका...59
6. केवल सशक्तीकरण से महिलाओं की समस्याएं हल नहीं की जा सकतीं..................................61
7. स्त्री-पुरुष संबंध: परिवर्तनशील नैतिक मानदंड...63

आर्थिक विकास

1. काले धन की अर्थव्यवस्था अपराध और भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है 66
2. कौशल अंतर: आर्थिक विकास में बाधा............67
3. उद्यमिता को बढ़ावा देने में माइक्रोफाइनेंस की भूमिका...68
4. क्या गिग इकॉनमी रोजगार का एक धारणीय मॉडल है?..69
5. शहरी मध्य वर्ग, भारत के रूपांतरण की कुंजी है...70
6. आर्थिक शक्ति समकालीन विश्व में किसी भी राष्ट्र की शक्ति की आधारशिला है 71
7. भारतीय अर्थव्यवस्था चौथी औद्योगिक क्रांति के लिए कितनी तैयार है?......................................73
8. खाद्य अपव्यय: भारत के खाद्य सुरक्षा संबंधी प्रयासों में बाधक...75
9. सामाजिक पूंजी, शासन और प्रकृति में निवेश भारत के दीर्घकालिक विकास की कुंजी है।................77

ग्रामीण विकास

1. कृषि व्यवस्था में सुधार कर देश के ग्रामीण अर्थतंत्र को सशक्त बना सकते हैं.....................80
2. ग्रामीण भारत में किसान ऋण का संकट...........81
3. ग्रामीण बिहार के रूपांतरण में सात निश्चय योजना की भूमिका एवं सामाजिक-आर्थिक प्रभाव........82
4. कौशल विकास के माध्यम से ग्रामीण भारत का रूपांतरण...83
5. ग्रामीण रूपांतरण की चुनौतियां व अवसर..........84

शिक्षा एवं स्वास्थ्य

1. नई शिक्षा नीति के फायदे और नुकसान............86
2. कोविड के बाद बदलाव मांगती शिक्षा...............87
3. शिक्षा में निजीकरण का प्रभाव: लाभ और कमियां...88
4. क्या आयुष्मान भारत पहल भारत में सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है?.89
5. भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य: वित्तपोषण एवं वहनीयता संबंधी चुनौतियां...............................90
6. युवाओं को सशक्त बनाने और बेरोजगारी को कम करने में व्यावसायिक शिक्षा की भूमिका............91
7. स्वास्थ्य एवं शिक्षा में निवेश के माध्यम से जनसांख्यिकीय लाभांश का उपयोग...................92
8. शिक्षा का सही उद्देश्य तथ्यों का नहीं बल्कि मूल्यों का ज्ञान होना है...94

लोकतंत्र एवं शासन

1. क्या भ्रष्टाचार एक पीड़ितविहीन अपराध है?......96

2. भारतीय चुनावी राजनीति को आकार देने में जाति-आधारित वोट बैंकों की भूमिका..............97
3. सार्वजनिक विश्वास के निर्माण में राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका 98
4. संविधान की पवित्रता अनिवार्य रूप से धर्मनिरपेक्षता की पुष्टि में निहित है 99
5. राजनीति का अपराधीकरण: भारतीय लोकतंत्र के समक्ष एक गंभीर संकट.................................101
6. भारत में क्षेत्रीय असमानता दूर करने में राजकोषीय संघवाद कितना प्रभावी?................................103
7. जागरूक मतदाता: लोकतंत्र का मजबूत स्तंभ...105

मीडिया एवं समाज

1. इंटरनेट ने हमारे संसार को विश्वगाँव में बदल दिया है। 108
2. क्या डिजिटल युग में पारंपरिक मीडिया अपनी प्रासंगिकता खो रहा है?................................109
3. सोशल मीडिया इन्फ्लुएंसर्स का उदय: उद्यमिता का एक नया युग?..110
4. डिजिटल युग में साइबरबुलिंग: सोशल मीडिया की भूमिका...111
5. ओटीटी प्लेटफॉर्म: विनियमन बनाम अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता 112
6. गलत सूचनाओं के प्रसार से जन्म लेता सूचना का संकट...113
7. क्या वर्तमान दौर में इंटरनेट की सेंसरशिप आवश्यक है?..114
8. मीडिया, प्राकृतिक या कृत्रिम जनमत का माध्यम है।..115

अधिकार एवं कर्तव्य

1. धार्मिक स्वतंत्रता बनाम सार्वजनिक व्यवस्था: एक संवैधानिक परिप्रेक्ष्य.......................................118
2. मौलिक अधिकारों की रक्षा में जनहित याचिकाओं की भूमिका...119
3. बेघर व्यक्तियों के अधिकार: कानूनी सुरक्षा और सामाजिक उत्तरदायित्व...................................120
4. वैश्वीकृत विश्व में शरणार्थियों और प्रवासियों के अधिकार...121
5. क्या 21वीं सदी के नेटिजेंस के लिए गोपनीयता एक भ्रम है?..122
6. कर्तव्यों का अच्छी तरह से निर्वहन तदनुरूप अधिकारों का निर्माण करता है........................124
7. नागरिकों की व्यक्तिगत पसंद निजता के अधिकार के अंतर्गत संरक्षित है....................................125

राष्ट्रीय सुरक्षा

1. भारत में आतंकवाद और उग्रवाद को बढ़ावा देने में गैर-राज्य तत्वों की भूमिका............................128
2. हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत का बढ़ता प्रभाव: आर्थिक, कूटनीतिक और सैन्य आयाम............129
3. व्यक्तिगत स्वतंत्रता बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा...........130
4. आतंक एवं हिंसक अतिवाद के दौर में भारत की सुरक्षा..131

वैश्वीकरण

1. वैश्वीकरण के युग में हम भारतीय सांस्कृतिक विरासत को कैसे संरक्षित कर सकते हैं?.........134
2. वैश्विक चुनौतियां वैश्विक समाधानों की मांग करती हैं..135
3. वैश्वीकरण के युग में बच्चों का मानसिक स्वास्थ्य...137
4. वैश्विक शरणार्थी संकट: समस्या एवं समाधान...139

प्रौद्योगिकी विकास

1. विज्ञान और प्रौद्योगिकी ब्रह्मांड के रहस्यों को जानने में सहायक हैं...142
2. आधुनिक संचार क्रांति ने मानव के संचार के साधनों और टेक्नोलॉजी के प्रति जागरूकता में क्रांतिकारी रूप से वृद्धि की है........................143
3. स्वचालन, रोजगार के लिए खतरा है या अवसर? 144
4. भविष्य उनका है, जिनके पास डेटा है.............145

जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण

1. भारतीय कृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव तथा बचाव के उपाय....................................148
2. रोजगार पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव..........149
3. क्या जलवायु परिवर्तन अनुकूलन एक दीर्घकालिक समाधान है या एक अल्पकालिक आवश्यकता?..150
4. पर्यावरणीय चिंताओं ने अंतरराष्ट्रीय राजनीति की दिशा बदल दी है..151

सतत विकास एवं नवीकरणीय ऊर्जा

1. जलवायु परिवर्तन के खिलाफ भारत की लड़ाई में सौर ऊर्जा की भूमिका...................................154
2. 2070 तक भारत का शुद्ध शून्य लक्ष्य: चुनौतियां और अवसर..155
3. खतरे में धरती नहीं, हम हैं............................156
4. हम भावी पीढ़ियों को एक स्वस्थ और टिकाऊ ग्रह के अधिकार से वंचित नहीं कर सकते...........158
5. नवीकरणीय ऊर्जा: भविष्य की ऊर्जा आवश्यकताओं का विकल्प............................159
6. सतत विकास का उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण के जरिये ही प्राप्त किया जा सकता है.................161

नैतिक एवं दार्शनिक निबंध

1. जंगल अपने पेड़ स्वयं तैयार करता है। यह लोगों के जंगल में आकर बीज फेंकने का इंतजार नहीं करता है।..164
2. अपने अनिवार्य कर्तव्य का पालन करें क्योंकि कर्म, निष्क्रियता से अवश्य ही उत्तम है।....................165
3. उत्कृष्ट कला हमारे अनुभव को प्रकाशित करती है या सत्य को उद्घाटित करती है।......................166
4. हम इतिहास-निर्माता नहीं हैं, बल्कि हम इतिहास द्वारा निर्मित हैं।...................................167
5. विचार जीवन का आधार है। 168
6. जीवन, स्वयं को अर्थपूर्ण बनाने का अवसर है...169
7. क्या अधिक मूल्यवान है, बुद्धिमत्ता या चेतना?...171
8. विकास जैसी गतिशील प्रक्रिया में मानवाधिकार, मूल्यवान मार्गदर्शक हैं.....................................173
9. सद्भावना ही एकमात्र ऐसी संपत्ति है जिसे प्रतिस्पर्धा कम या नष्ट नहीं कर सकती 175
10. अंतर्निहित प्रवृत्ति की कमजोरी चरित्र की कमजोरी बन जाती है 177
11. समझने का सुख सबसे उत्कृष्ट आनंद है 179
12. उच्च उपलब्धि सदैव उच्च अपेक्षा के ढांचे के अंतर्गत प्राप्त होती है 181
13. मौन सबसे सशक्त भाषण है, धीरे-धीरे दुनिया आपको सुनेगी 183
14. विश्वास को हमेशा तर्क से तौलना चाहिए, जब विश्वास अंधा हो जाता है तो मर जाता है 185

निबंध

70वीं BPSC मुख्य परीक्षा

खण्ड-1

समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की महत्ता

वह भूमि जहां ऋषियों ने वेदों की वाणी रची, जहां बुद्ध ने शांति का उपदेश दिया, जहां गांधी ने अहिंसा को जीवन का सत्य माना – वही भारत आज वैश्विक मंच पर अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। यह देश केवल एक भूखंड नहीं, विचारों का समंदर है, जहां आधुनिकता और परंपरा हाथों में हाथ डाले चलती है।

आज जब विश्व एक अस्थिर संतुलन के तल पर खड़ा है – जहां तकनीक, पर्यावरण, राजनीति और युद्ध की लहरें एक साथ उफान पर हैं – तब भारत की स्थिर दृष्टि, सहिष्णु स्वभाव और संतुलित सोच मानवता के लिए एक नई दिशा की रोशनी बन कर उभर रही है।

आज का विश्व वैश्वीकरण, तकनीकी प्रगति, बहुपक्षीय सहयोग और सतत विकास के आदर्शों से प्रेरित है। इस वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत ने एक अत्यंत प्रभावशाली भूमिका निभाई है। विविधताओं से भरे अपनी विशाल जनसंख्या संरचना, प्राचीन सांस्कृतिक विरासत, वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति, लोकतांत्रिक संस्थाओं की सुदृढ़ता और रणनीतिक कूटनीति के चलते भारत ने अंतरराष्ट्रीय मंच पर अपनी एक विशिष्ट पहचान स्थापित की है।

आज भारत विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और क्रय शक्ति क्षमता के संदर्भ में विश्व की तीसरी सबसे बड़ी आर्थिक शक्ति। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार, भारत की जीडीपी 2020 में लगभग 2.9 ट्रिलियन डॉलर थी और 2025 तक यह 4.2 ट्रिलियन डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। भारत की अर्थव्यवस्था का यह विकास उसकी आईटी सेवाओं, फार्मास्यूटिकल्स, विनिर्माण और कृषि क्षेत्रों में क्षमता का परिचायक है। भारत आज विश्व की "फार्मेसी" बन चुका है – जेनेरिक दवाओं और वैक्सीन उत्पादन में अग्रणी। कोविड-19 महामारी के दौरान "वैक्सीन मैत्री" अभियान के तहत भारत ने दर्जनों देशों को टीके भेजे।

भारत की वैश्विक भूमिका केवल आर्थिक विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक ऐसे जिम्मेदार भागीदार की छवि भी प्रस्तुत करता है जो वैश्विक समस्याओं के समाधान में अग्रणी भूमिका निभा रहा है – चाहे वह जलवायु परिवर्तन हो, महामारी से निपटना हो, या आतंकवाद का मुकाबला करना हो।

भारत की स्वतंत्रता के बाद अंतरराष्ट्रीय राजनीति में उसकी भूमिका गुटनिरपेक्ष आंदोलन के माध्यम से स्थापित हुई। भारत ने न तो पूंजीवादी अमेरिका का पक्ष लिया और न ही साम्यवादी सोवियत संघ का। इस संतुलित कूटनीति के कारण भारत विकासशील देशों के बीच नेतृत्वकर्ता के रूप में उभरा।

ब्रिटिश उपनिवेशवाद के प्रभाव से उबरते हुए भारत ने वैश्विक मंचों पर उपनिवेशवाद-विरोधी और शांति के समर्थक के रूप में भूमिका निभाई। वर्तमान समय में भी भारत इस भूमिका का सशक्त और प्रभावी तरीके से निर्वहन कर रहा है।

भारत ने अपने द्विपक्षीय और बहुपक्षीय संबंधों को मजबूत करते हुए क्वाड, ब्रिक्स, जी20, और शंघाई सहयोग संगठन जैसे मंचों पर सक्रिय भूमिका निभाई है। भारत और अमेरिका के बीच रक्षा सहयोग, फ्रांस और इजराइल के साथ रणनीतिक साझेदारी और आसियान देशों के साथ बढ़ते व्यापार संबंध, भारत की कूटनीतिक परिपक्वता को दर्शाते हैं। वहीं, चीन की वन बेल्ट वन रोड परियोजना और हिंद महासागर में बढ़ते दबाव के संदर्भ में भारत ने रणनीतिक सावधानी और समुद्री सहयोग को प्राथमिकता दी है।

भारत की 5000 वर्ष पुरानी सभ्यता, योग, आयुर्वेद, गांधीजी के अहिंसावादी दर्शन इत्यादि ने भारत को एक सांस्कृतिक महाशक्ति बना दिया है। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस इसका प्रतीक है। प्रवासी भारतीयों की भूमिका भी वैश्विक प्रभाव में महत्त्वपूर्ण रही है। सुंदर पिचाई (गूगल), सत्य नडेला (माइक्रोसॉफ्ट) जैसे भारतीय मूल के सीईओ वैश्विक मंचों पर भारत का परचम लहरा रहे हैं।

जलवायु परिवर्तन आज विश्व की सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक है और भारत इससे निपटने में अग्रणी भूमिका निभा रहा है। भारत ने 2070 तक "नेट जीरो कार्बन उत्सर्जन" का लक्ष्य निर्धारित किया है। राष्ट्रीय सौर मिशन, स्वच्छ भारत मिशन, स्मार्ट सिटी अभियान जैसे प्रयास भारत की प्रतिबद्धता का प्रतीक हैं। भारत अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन और आपदा रोधी अवसंरचना गठबंधन जैसे संगठनों का नेतृत्व कर रहा है।

भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम आज विश्व में सम्मानित है। "चंद्रयान" और "मंगलयान" जैसी परियोजनाओं ने भारत को वैज्ञानिक उपलब्धियों के शिखर पर पहुंचाया है। डिजिटल इंडिया, आधार प्रणाली, यूपीआई जैसे नवाचारों ने भारत को एक डिजिटल महाशक्ति में परिवर्तित कर दिया है। ये मॉडल अब अन्य देशों द्वारा भी अपनाए जा रहे हैं।

वैश्विक पटल पर अपनी सशक्त भूमिका के निर्वहन के बावजूद भारत के सामने अभी कई समस्याएं और चुनौतियां मौजूद हैं जिनसे निपटना अभी बाकी है। भारत की 80 प्रतिशत ऊर्जा आवश्यकता अभी भी जीवाश्म ईंधन से पूरी होती है। भारत के मानव विकास संकेतक अभी भी कई चुनौतियों से जूझ रहे हैं - जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं, और ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी। आर्थिक असमानता और सामाजिक बहिष्करण जैसे मुद्दे विकास की गति को बाधित कर सकते हैं, जिन्हें दूर करने के लिए विशेष नीतिगत प्रयास आवश्यक हैं।

भारत आज केवल एक क्षेत्रीय शक्ति नहीं, बल्कि एक वैश्विक नेतृत्वकर्ता के रूप में उभर रहा है। उसकी लोकतांत्रिक संस्थाएं, उसकी वैज्ञानिक सोच, और उसकी सांस्कृतिक गहराई उसे एक अद्वितीय राष्ट्र बनाती हैं। इसकी आर्थिक वृद्धि, वैज्ञानिक प्रगति, कूटनीतिक संतुलन और सांस्कृतिक सॉफ्ट पावर ने उसे अंतरराष्ट्रीय मंच पर विशिष्ट स्थान दिलाया है। हालांकि, भारत को अपनी आंतरिक चुनौतियों - जैसे गरीबी, बेरोजगारी और शिक्षा की गुणवत्ता - पर काम करते रहना होगा ताकि यह अपनी वैश्विक भूमिका को और अधिक सशक्त बना सके। ष्वसुधैव कुटुम्बकम्ष् की भावना के साथ भारत एक ऐसा भविष्य रच रहा है जिसमें न केवल उसका विकास सुनिश्चित हो, बल्कि विश्व के कल्याण में भी उसकी भूमिका केंद्रीय हो।

देश का विकास और सूचना प्रौद्योगिकी

21वीं सदी को सूचना प्रौद्योगिकी का युग कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और डेटा विज्ञान जैसे उपकरणों ने दुनिया की गति और दिशा दोनों को बदल दिया है। भारत जैसे विशाल, विविध और विकासशील देश के लिए सूचना प्रौद्योगिकी सिर्फ तकनीकी साधन नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक विकास का इंजन बन चुकी है। सूचना प्रौद्योगिकी आधुनिक युग की वह दिव्य दीप्ति है, जिसने भारत की विकास-यात्रा को एक नवप्रभा प्रदान की है। यह वह दीपशिखा है, जो अंधकार में डूबे गांवों को उजाला प्रदान करती है और महानगरों को नवदृष्टि।

सूचना प्रौद्योगिकी का स्वरूप और भारत में विकास

सूचना प्रौद्योगिकी वह विज्ञान है जो डेटा के संग्रहण, विश्लेषण, प्रसंस्करण और संप्रेषण से संबंधित है। इसमें कंप्यूटर नेटवर्किंग, सॉफ्टवेयर विकास, इंटरनेट सेवाएं, कृत्रिम बुद्धिमत्ता , ब्लॉकचेन और क्लाउड कंप्यूटिंग शामिल हैं। भारत में इसका प्रारंभ 1980 के दशक में हुआ और 1990 के आर्थिक उदारीकरण के बाद यह तीव्र गति से आगे बढ़ा। बेंगलुरु, हैदराबाद, पुणे जैसे नगर आज विश्व के प्रमुख आईटी हब बन चुके हैं। डिजिटल इंडिया, आधार, यूपीआई, भारत नेट, डिजिलॉकर, जैसे कार्यक्रमों ने सूचना प्रौद्योगिकी को आम नागरिकों के जीवन का हिस्सा बना दिया है।

विकास के विविध क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी का योगदान

1. आर्थिक प्रगति और रोजगार सृजन

आईटी और आईटी-सक्षम सेवाओं ने भारत को वैश्विक अर्थव्यवस्था में मजबूती से स्थापित किया है। जहां कभी भारत की अर्थव्यवस्था बैलों की गति से चलती थी, वहां अब बिट और बाइट की गति से प्रगति हो रही है। सूचना प्रौद्योगिकी ने भारत की अर्थव्यवस्था को वह नवसंजीवनी दी है, जिससे देश वैश्विक व्यापार में गर्व से खड़ा हो सका है। टाटा, इन्फोसिस, विप्रो जैसे नाम अब केवल कंपनियां नहीं, बल्कि भारत के आत्मविश्वास के प्रतीक बन चुके हैं।

भारत का आईटी उद्योग 2024-25 में लगभग 283 बिलियन डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। लाखों लोगों को इसमें रोजगार मिला है। इसके साथ ही पेटीएम, फ्लिपकार्ट, ओला, जोमैटो जैसे स्टार्टअप्स ने नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा दिया है।

2. शिक्षा का डिजिटल परिवर्तन

ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म ने छात्रों को कहीं से भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा दी है। कोविड-19 महामारी के दौरान यह तकनीक संजीवनी साबित हुई। डिजिटल शिक्षा के जरिए ग्रामीण और दूरदराज क्षेत्रों तक ज्ञान की पहुंच सुनिश्चित हुई।

बिहार की
लोक कहावतों पर
आधारित निबंध

अनेर धुनेर के राम रखवार

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

एक बार एक गांव में एक अनाथ बच्चा 'रघु' रहता था। उसकी न कोई देखभाल करने वाला था और न ही उसकी मदद करने वाला। बारिश की एक अंधेरी रात में, जब वह भूखा-प्यासा गाँव के चौपाल पर सहमा बैठा था, एक बूढ़ा किसान उसके पास आया। किसान ने उसे खाना खिलाया, अपने घर में जगह दी, और उसे एक नई जिंदगी दी। बच्चे ने किसान से पूछा, "आपने मेरी मदद क्यों की?" किसान मुस्कुराया और बोला, "जब मैं तुम्हारी उम्र का था, तब किसी ने मेरी भी मदद की थी। मैंने यह कर्ज लौटाया है।" यह कहानी उस कहावत की ओर इशारा करती है जो बताती है कि जब कोई सहारा नहीं होता, तो कोई न कोई मददगार बनकर सामने आता है।

"अनेर धुनेर के राम रखवार" कहावत का अर्थ है कि ईश्वर या प्रकृति उन लोगों की मदद करते हैं, जिनका कोई सहारा नहीं होता। यह कहावत केवल ईश्वरीय भरोसे तक सीमित नहीं है, बल्कि यह हमें यह भी सिखाती है कि सामाजिक सहयोग, आत्मनिर्भरता और नैतिक जिम्मेदारी का महत्व भी कम नहीं है। इस लोकोक्ति में "राम" शब्द केवल धार्मिक संदर्भ में नहीं है, बल्कि यह न्याय, करुणा और सहानुभूति का प्रतीक है।

"राम" केवल एक देवता नहीं हैं; वे नैतिकता और मानवीय मूल्यों के प्रतीक हैं। जब हम कहते हैं कि ईश्वर परित्यक्तों का सहारा बनते हैं, तो इसका अर्थ यह भी है कि हमें कठिन समय में ईश्वर पर विश्वास करना चाहिए।

"अनेर धुनेर के राम रखवार" केवल ईश्वरीय सहायता की बात नहीं करती, यह हमें यह भी सिखाती है कि समाज का कर्तव्य है कि वह कमजोरों और वंचितों को सहारा दे। रघु जैसे बच्चों की कहानियां हमें हमारी नैतिक जिम्मेदारी का बोध कराती हैं। एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक उदाहरण "चंपारण सत्याग्रह" है।

यहाँ गांधीजी ने गरीब किसानों के अधिकारों के लिए संघर्ष किया। वे किसानों के लिए 'रखवार' बने, तब, जब समाज ने उन्हें अकेला छोड़ दिया था। इस घटना ने न केवल किसानों के जीवन में बदलाव लाया, बल्कि यह सिद्ध किया कि एक व्यक्ति भी समाज के लिए बदलाव की लहर ला सकता है।

सावित्रीबाई फुले का उदाहरण भी इस संदर्भ में अत्यधिक प्रासंगिक है। उन्होंने समाज के उन वर्गों को शिक्षा का उपहार दिया, जिन्हें समाज ने हाशिये पर छोड़ दिया था। उन्होंने यह दिखाया कि "राम" का सहारा केवल ईश्वर तक सीमित नहीं है; यह हर व्यक्ति में हो सकता है जो दूसरों के लिए मदद का हाथ बढ़ाता है।

यह लोकोक्ति हमें आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा भी देती है। जीवन में कठिनाइयां अवश्य हैं, लेकिन हर मुश्किल के बाद एक नया अवसर भी छिपा होता है। संत कबीर का जीवन इस बात का प्रमाण है। उन्होंने न तो किसी धार्मिक व्यवस्था का सहारा लिया और न ही किसी सामाजिक सहायता का। फिर भी, उनके विचारों और उपदेशों ने समाज में क्रांति ला दी। कबीर की कहानी हमें सिखाती है कि सच्ची ताकत हमारे अंदर होती है, और हमें खुद पर विश्वास रखना चाहिए।

इस लोकोक्ति का एक और पहलू शिक्षा और नैतिकता के महत्व को उजागर करता है। शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्त करने का माध्यम नहीं है; यह समाज के प्रति हमारी जिम्मेदारी का बोध भी कराती है। सावित्रीबाई फुले और राजा राममोहन राय जैसे समाज सुधारकों ने शिक्षा के माध्यम से वंचित वर्गों को सशक्त बनाया।

रघु की कहानी, कबीर का जीवन, और सावित्रीबाई फुले के योगदान इस बात को सिद्ध करते हैं कि "अनेर धुनेर के राम रखवार" केवल एक लोकोक्ति नहीं, बल्कि जीवन जीने का एक दृष्टिकोण है। जीवन के अनगिनत मोड़ हमें यह सिखाते हैं कि जब हर द्वार बंद हो जाता है, तब भी कहीं न कहीं एक रोशनी की किरण हमारा इंतजार कर रही होती है। वह रोशनी कभी किसी अनजान मददगार के रूप में आती है, तो कभी हमारे भीतर छिपी ताकत और साहस के रूप में। आवश्यकता है हमें इसे पहचानने की।

जीवन की परिभाषा सिर्फ सांस लेने तक सीमित नहीं है; इसका असली अर्थ उस ऊर्जा में है, जो दूसरों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए समर्पित होती है। जब हम दूसरों के लिए दीप जलाते हैं, तो उसकी रोशनी न केवल उनके अंधेरे को मिटाती है, बल्कि हमारी आत्मा को भी उज्ज्वल करती है। जब हम दूसरों की मदद करते हैं, तो हमें एक गहरी आत्म-संतुष्टि मिलती है। यह हमें यह महसूस कराता है कि हमने कुछ अच्छा किया है और हमारी जिंदगी का मकसद पूरा हुआ है। यह हमें करुणा, दया और सहानुभूति जैसे गुणों को विकसित करने में मदद करता है। इसी अद्भुत सामंजस्य में जीवन की सच्ची उपलब्धि और सार्थकता छिपी है।

आगु नाथ नै पाछू पगहा, बिना छान के कूदे गधा

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

"आगु नाथ नै पाछू पगहा, बिना छान के कूदे गधा", यह लोकोक्ति मानव जीवन में अनुशासन, संतुलन और विवेक की आवश्यकता को सरल और प्रभावशाली तरीके से व्यक्त करती है। इसमें "नाथ" का अर्थ है नियंत्रक या स्वामी, और "पगहा" का तात्पर्य है वह रस्सी जो जानवर को बाँधकर नियंत्रित करती है। जब जीवन में न नियंत्रण होता है और न ही दिशा, तो व्यक्ति का व्यवहार उस गधे जैसा हो जाता है, जो बिना किसी योजना या सोच के कूदता है और अक्सर गलतियाँ करता है।

यह लोकोक्ति केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न पहलुओं की ओर भी इशारा करती है। यह हमें सिखाती है कि अनियंत्रित और असंतुलित जीवन न केवल व्यक्ति के लिए हानिकारक है, बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी अराजकता का कारण बनता है। जीवन में अनुशासन का अर्थ केवल नियमों का पालन करना नहीं है, बल्कि अपनी सोच, कार्य और व्यवहार को सही दिशा में ले जाना है।

जब कोई व्यक्ति बिना सोच-समझे निर्णय लेता है, तो वह न केवल खुद को नुकसान पहुँचाता है, बल्कि अपने आस-पास के लोगों पर भी नकारात्मक प्रभाव डालता है। उदाहरण के लिए, एक विद्यार्थी जो बिना योजना के पढ़ाई करता है, वह न केवल परीक्षा में असफल होता है, बल्कि अपना समय और ऊर्जा भी व्यर्थ करता है। इसी प्रकार, समाज में जब लोग अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को नहीं समझते, तो अराजकता फैलती है।

किसी भी समाज के विकास के लिए अनुशासन अनिवार्य है। यदि समाज के हर व्यक्ति को अपने अधिकार और कर्तव्यों का ज्ञान हो और वे अनुशासन के साथ उनका पालन करें, तो समाज में शांति और प्रगति संभव है। अनुशासन के अभाव में, लोग स्वेच्छाचारी और लापरवाह हो जाते हैं। इससे व्यक्तिगत जीवन के साथ-साथ सामूहिक जीवन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, यदि सरकारें बिना सोच-समझे नीतियाँ लागू करें, तो उसका सीधा असर समाज की प्रगति पर पड़ता है।

यह लोकोक्ति जीवन में भूत और भविष्य के बीच संतुलन बनाए रखने का महत्व भी बताती है। भूतकाल से सीखे गए सबक और भविष्य की सही योजना न केवल व्यक्तिगत विकास में सहायक है, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय समृद्धि का आधार भी हैं। जब व्यक्ति अपने भूतकाल की गलतियों से सबक लेता है और उन अनुभवों के आधार पर भविष्य की योजना बनाता है, तो वह न केवल अपने जीवन को सफल बनाता है, बल्कि समाज के लिए भी एक प्रेरणा बनता है।

उदाहरण के लिए, इतिहास से सीखे गए सबक हमें यह सिखाते हैं कि असंगठित और गैर-योजनाबद्ध प्रयास कभी सफल नहीं होते।

राष्ट्रीय स्तर पर, यह लोकोक्ति नीतियों और योजनाओं में अनुशासन और दूरदर्शिता की आवश्यकता को रेखांकित करती है। जब सरकारें बिना उचित योजना और दृष्टिकोण के निर्णय लेती हैं, तो वह न केवल संसाधनों का नुकसान करती हैं, बल्कि जनता के विश्वास को भी कमजोर करती हैं।

वैश्विक स्तर पर, यह लोकोक्ति मानवता के लिए एक चेतावनी के रूप में कार्य करती है। जलवायु परिवर्तन, आर्थिक असमानता, और वैश्विक राजनीति जैसे मुद्दों पर अनुशासन और संतुलन का अभाव दुनिया के लिए संकट उत्पन्न कर सकता है। जब तक हर देश अपने कार्यों और नीतियों में अनुशासन और जिम्मेदारी को प्राथमिकता नहीं देगा, तब तक वैश्विक स्थिरता और विकास असंभव रहेगा।

सामूहिक जीवन में, यह लोकोक्ति समाज के हर वर्ग के लिए एक मार्गदर्शक है। यदि हर व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन करता है और अपने कार्यों को सही दिशा में ले जाता है, तो समाज में अराजकता की जगह शांति और प्रगति होगी।

सामाजिक दृष्टि से, यह लोकोक्ति उस आवश्यकता को उजागर करती है कि समाज में हर व्यक्ति को अपने अधिकारों और कर्तव्यों का ज्ञान होना चाहिए। जब लोग अपनी जिम्मेदारियों को नहीं समझते, तो समाज में असंतुलन और अव्यवस्था उत्पन्न होती है। आर्थिक दृष्टि से, यह लोकोक्ति संसाधनों के कुशल प्रबंधन और योजना की आवश्यकता पर जोर देती है। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यवसायी बिना योजना और अनुशासन के अपने व्यापार को संचालित करता है, तो उसका व्यापार असफल हो सकता है।

हमें अपने भूतकाल से सीखकर भविष्य की योजना बनानी चाहिए और अनुशासन के साथ अपने कार्यों को अंजाम देना चाहिए। यही लोकोक्ति का सार है-सोच-समझकर, अनुशासन के साथ और जिम्मेदारी से कार्य करना। यदि हम इस लोकोक्ति की शिक्षा को अपने जीवन में अपनाएँ, तो न केवल हमारा व्यक्तिगत जीवन सफल होगा, बल्कि समाज और राष्ट्र भी स्थिरता और प्रगति की ओर बढ़ेंगे।

धर्म के बिना विज्ञान नाङ्गर छै, विज्ञान के बिना धर्म आन्हर छै

(68वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

"धर्म के बिना विज्ञान नाङ्गर छै, विज्ञान के बिना धर्म आन्हर छै" एक महत्वपूर्ण विचार है, जो यह दर्शाता है कि विज्ञान और धर्म दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। यह विचार हमें सिखाता है कि केवल विज्ञान पर निर्भर रहना या केवल धर्म का पालन करना दोनों ही सीमित दृष्टिकोण हैं। **अल्बर्ट आइंस्टीन** ने भी इस सन्दर्भ में कहा था कि **विज्ञान केवल भौतिक दुनिया की व्याख्या करता है जबकि धर्म मानवता की गहरी भावनाओं और नैतिक मूल्यों को समझाता है।**

विज्ञान और धर्म दोनों मानवता के विकास में अहम हैं, लेकिन इनकी भूमिकाएं अलग हैं। विज्ञान तथ्यों और प्रमाणों पर आधारित है, जो हमें प्राकृतिक घटनाओं को समझने में मदद करता है, जैसे पृथ्वी की उत्पत्ति और ब्रह्मांड की संरचना। वहीं, धर्म नैतिकता, आस्था और उद्देश्य से जुड़ा होता है, जो जीवन को अर्थ और दिशा देता है। दोनों जब मिलकर काम करते हैं, तो वे एक-दूसरे की कमी को पूरा कर सकते हैं- विज्ञान हमें सच्चाई की खोज में मदद करता है, जबकि धर्म जीवन के गहरे सवालों और नैतिक मार्गदर्शन में सहायक होता है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विज्ञान और धर्म के बीच संबंध जटिल रहे हैं। कई वैज्ञानिक जैसे गैलीलियो गैलीली और निकोलस कॉपरनिकस ने अपने विचारों के कारण धार्मिक संस्थानों से उत्पीड़न झेला, क्योंकि उनके सिद्धांत पारंपरिक धार्मिक विश्वासों से अलग थे। हालांकि, समय के साथ कई धार्मिक संस्थानों ने विज्ञान को अपनाया और इसे अपने विश्वासों के साथ समन्वयित करने का प्रयास किया। उदाहरण के तौर पर, कैथोलिक चर्च ने गैलीलियो की खोजों को स्वीकार किया और आज कई धार्मिक नेता विज्ञान की प्रगति का समर्थन करते हैं।

विज्ञान और धर्म में संतुलन बनाए रखना बहुत जरूरी है। यदि हम केवल विज्ञान पर निर्भर रहते हैं, तो हम जीवन के मानसिक और आध्यात्मिक पहलुओं को नजरअंदाज कर सकते हैं, जैसे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन भी महत्वपूर्ण हैं। वहीं, अगर हम सिर्फ धर्म पर आधारित रहते हैं और वैज्ञानिक तथ्यों को नकारते हैं, तो हम वास्तविकता से दूर हो सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, यदि कोई व्यक्ति बीमारी को सिर्फ ईश्वर की इच्छा मानकर चिकित्सा उपचार से बचता है, तो वह अपनी जान को खतरे में डाल सकता है। इसलिए, विज्ञान और धर्म का संयोजन हमें एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है, जो जीवन को अधिक संतुलित और स्वस्थ बनाता है।

अल्बर्ट आइंस्टीन का मानना था कि विज्ञान और धर्म एक-दूसरे के पूरक हैं। उन्होंने कहा, "विज्ञान बिना धर्म के अधूरा है" और "धर्म बिना विज्ञान के अंधा है", क्योंकि विज्ञान भौतिक दुनिया की व्याख्या करता है, जबकि धर्म मानवता के नैतिक मूल्य और दिशा प्रदान करता है। आइंस्टीन का मानना था कि विज्ञान तभी सार्थक है जब वह मानवता की भलाई के लिए हो, और यदि विज्ञान नैतिकता से अलग हो जाए, तो उसके परिणाम विनाशकारी हो सकते हैं।

डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी विज्ञान और धर्म के संतुलन पर जोर दिया। उनका मानना था कि विज्ञान भौतिक दुनिया को समझाता है, जबकि धर्म नैतिक और आध्यात्मिक दिशा देता है। उन्होंने कहा, **"विज्ञान हमें यह सिखाता है कि कैसे चीजें काम करती हैं, जबकि धर्म हमें यह बताता है कि हमें क्या करना चाहिए।"** उनका विश्वास था कि दोनों मिलकर मानवता को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने में सक्षम हैं।

विज्ञान और धर्म का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जब समाज विज्ञान को धार्मिक दृष्टिकोण से देखता है, तो यह प्रगति की दिशा में आगे बढ़ता है, जैसे कई वैज्ञानिक खोजें धार्मिक विश्वासों से प्रेरित थीं। लेकिन जब विज्ञान और धर्म के बीच संघर्ष होता है, तो समाज में तनाव और विभाजन हो सकता है, जैसे विकासवाद के सिद्धांत का विरोध कुछ धार्मिक समूहों द्वारा किया गया। इसलिए, समाज को चाहिए कि वह विज्ञान और धर्म के बीच संवाद स्थापित करे। जब दोनों पक्ष एक-दूसरे को समझते हैं, तो वे एक-दूसरे को समृद्ध कर सकते हैं और इससे समाज में विकास होगा।

व्यक्तिगत जीवन में विज्ञान और धर्म का संतुलन मानसिक, शारीरिक और नैतिक विकास में मदद करता है। यह व्यक्ति को विवेकपूर्ण निर्णय लेने और समाज में सकारात्मक बदलाव लाने में सक्षम बनाता है।

आधुनिक युग में विज्ञान और धर्म के बीच संतुलन बनाए रखना चुनौतीपूर्ण हो गया है। नई तकनीकों जैसे जीन संपादन और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ने कुछ नैतिक प्रश्न उठाए हैं, जिनका समाधान दोनों दृष्टिकोणों "विज्ञान और धर्म" के माध्यम से होना चाहिए, ताकि मानवता के कल्याण को सुनिश्चित किया जा सके।

"धर्म के बिना विज्ञान नाङ्गर छै, विज्ञान के बिना धर्म आन्हर छै"- यह कहावत विज्ञान और धर्म के अनिवार्य संबंध को दर्शाती है। **रवींद्रनाथ टैगोर** ने कहा था, **"जब धर्म और विज्ञान मिलते हैं, तो वे मानवता को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने में सक्षम होते हैं, और दोनों का संतुलन जीवन को अधिक समृद्ध और उन्नत बनाता है"।**

गोदी में लड़िका, भर गाँव ढिंढोरा

बिहार की लोक संस्कृति में समृद्ध कहावतें और मुहावरे जीवन के गहरे सत्य को सरल और रोचक तरीके से प्रस्तुत करती हैं। इनमें से एक लोकप्रिय कहावत है "गोदी में लड़िका, भर गाँव ढिंढोरा"। इसका सीधा अर्थ है "अपने निकट ही रखी किसी चीज को इधर-उधर ढूँढना" या "वाँछित वस्तु की प्राप्ति के लिए अपने आस-पास दृष्टि न डालना"। यह कहावत व्यंग्यात्मक रूप से हमारी असंगठित और अव्यवस्थित जीवनशैली की ओर इशारा करती है। यह केवल व्यक्तिगत जीवन में ही नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, और सांस्कृतिक संदर्भों में भी गहरी सीख देती है।

"गोदी में लड़िका, भर गाँव ढिंढोरा" का शाब्दिक अर्थ तो सीधा है, लेकिन इसका भावार्थ अधिक गहरा है। यह कहावत उन स्थितियों को इंगित करती है, जहाँ व्यक्ति अपनी जिम्मेदारियों और संसाधनों की सही पहचान करने में विफल रहता है। वह दूसरों से सहायता और समाधान की अपेक्षा करता है, जबकि समस्या का समाधान उसके पास ही होता है। यह कहावत हमें यह भी सिखाती है कि ध्यान भटकाने और दिखावे के बजाय आत्मनिरीक्षण और वास्तविकता को समझने की आवश्यकता है।

बिहार जैसे कृषि प्रधान राज्य में यह कहावत विशेष रूप से प्रासंगिक है। यहाँ के लोग अपनी रोजमर्रा की समस्याओं का समाधान खोजने में बाहरी संसाधनों पर अधिक निर्भर हो जाते हैं, जबकि स्थानीय स्तर पर उनके पास कई साधन और समाधान मौजूद होते हैं। उदाहरण के लिए, किसान अपनी जमीन पर उत्पादकता बढ़ाने के उपाय करने के बजाय सरकारी सहायता की प्रतीक्षा करता है। सामाजिक संदर्भ में यह कहावत ग्रामीण जीवन की सामूहिकता और सामुदायिक रिश्तों को भी उजागर करती है। लोग अपनी समस्याओं को सुलझाने की बजाय पूरे गाँव को उसमें शामिल कर देते हैं, जिससे अराजकता का माहौल बनता है। यह प्रवृत्ति दिखावे और मान्यता की मानसिकता को भी बढ़ावा देती है।

राष्ट्रीय स्तर पर यह कहावत भारत के विकास और प्रबंधन से जुड़ी कई समस्याओं को उजागर करती है। अक्सर यह देखा गया है कि विभिन्न योजनाओं और नीतियों को लागू करते समय यदि वास्तविक समस्याओं का सही मूल्यांकन न हो तो इससे नीतियों के क्रियान्वयन में काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, यदि शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सरकार बड़ी योजनाएं बनाती है, खर्च भी खूब करती है, लेकिन पूर्व-मूल्यांकन सही नहीं हो तो योजनाओं का सकारात्मक प्रभाव नहीं दिखता है।

वैश्विक दृष्टि से यह कहावत आज की चुनौतियों के संदर्भ में भी उपयुक्त है। पर्यावरणीय संकट जैसे जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, और संसाधनों की कमी से निपटने के लिए दुनिया भर के देश आपसी सहयोग की बात करते हैं। लेकिन कई बार, वे अपनी स्थानीय समस्याओं और जिम्मेदारियों को अनदेखा कर देते हैं। उदाहरण के लिए, जब बड़े देश प्रदूषण नियंत्रण की बात करते हैं, तो वे अक्सर अपने घरेलू स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण उपायों को लागू करने में असफल रहते हैं।

आर्थिक दृष्टिकोण से, यह कहावत संसाधनों के कुशल प्रबंधन की आवश्यकता पर भी जोर देती है। व्यक्तिगत स्तर पर, यह हमें सिखाती है कि धन और साधनों का उपयोग सही तरीके से किया जाए। सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर, यह कहावत अव्यवस्थित आर्थिक नीतियों और बाहरी सहायता पर अत्यधिक निर्भरता की आलोचना करती है।

राजनीतिक दृष्टि से, यह कहावत नेतृत्व की प्राथमिकताओं पर सवाल उठाती है। यदि नेता और नागरिक अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए दूसरों पर निर्भर रहेंगे, तो समाज का विकास धीमा होगा। आत्म-निर्भरता और जागरूकता ही प्रभावी नेतृत्व का आधार है।

ऐतिहासिक दृष्टि से, यह कहावत बिहार के गौरवशाली अतीत और सामाजिक संरचना को उजागर करती है। बिहार ने प्राचीन काल में नालंदा विश्वविद्यालय जैसे ज्ञान के केंद्र दिए हैं, लेकिन वर्तमान में हम अपने संसाधनों का सही उपयोग करने में असफल रहे हैं। सांस्कृतिक दृष्टि से, यह कहावत हमें अपनी परंपराओं और जड़ों को पहचानने की प्रेरणा देती है। यह दिखावे और बाहरी मान्यता की खोज से बचने और अपने मूल्यों को बनाए रखने की सीख देती है।

रोजमर्रा की जिंदगी में, यह कहावत हमें व्यवस्थित और जागरूक जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करती है। चाहे वह परिवार में समस्याओं का समाधान हो, शिक्षा में ध्यान केंद्रित करना हो, या व्यक्तिगत जिम्मेदारियों का निर्वहन, यह कहावत हर पहलू में प्रासंगिक है।

भविष्य में, जब समाज और भी जटिल होगा, यह कहावत हमें याद दिलाएगी कि प्राथमिकताओं की सही पहचान और आत्म-निर्भरता ही सच्ची प्रगति का मार्ग है। डिजिटल युग में, जब लोग अधिकतर समय दिखावे में बिताते हैं, यह कहावत व्यक्तिगत और सामाजिक जागरूकता को बढ़ावा देती है।

आज के समय में, जब लोग बाहरी मान्यता और दिखावे के पीछे भाग रहे हैं, यह कहावत आत्म-मूल्यांकन और आत्म-निर्भरता का महत्व सिखाती है। यह केवल स्थानीय संदर्भ में ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर भी आत्म-जागरूकता और कुशलता का संदेश देती है। यह कहावत हमारी सांस्कृतिक धरोहर का हिस्सा है, जिसकी प्रेरणा आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचाना न केवल हमारी जिम्मेदारी है, बल्कि यह हमारी सांस्कृतिक पहचान को सहेजने का भी एक तरीका है।

अन्हा गांव में कन्हा राजा

"अन्हा गांव में कन्हा राजा" केवल एक सरल लोकोक्ति नहीं, बल्कि यह समाज के भीतर व्याप्त वास्तविकताओं और विडंबनाओं का प्रतीक है। यह हमें यह सिखाती है कि किसी भी समाज की प्रगति के लिए उसके नेतृत्व का सही होना अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह लोकोक्ति समाज के उस सच को उजागर करती है, जहाँ संसाधनों और योग्यता की कमी में मामूली काबिलियत रखने वाला भी नेतृत्व की भूमिका निभा लेता है।

जब हम एक मजबूत और सक्षम समाज की कल्पना करते हैं, तो हमें यह समझना होगा कि वास्तविक उन्नति का सृजन योग्यता और ज्ञान से होता है, न कि केवल परिस्थितियों और अवसरों से। इस प्रकार, समाज को नेतृत्व के सही मापदंडों को स्थापित करने की आवश्यकता है, ताकि यह कहावत केवल एक खेदजनक इतिहास बनकर न रह जाए।

राजनीति में यह कहावत अत्यंत प्रासंगिक है। लोकतंत्र में, जहां बहुमत का निर्णय सबसे महत्वपूर्ण होता है, वहां अक्सर ऐसे नेता चुने जाते हैं, जिनकी योग्यता अपेक्षाकृत कम होती है, लेकिन वे जनता से जुड़ने की कला में निपुण होते हैं। इस प्रकार की लोकोक्ति अक्सर नेतृत्व की गुणवत्ता पर प्रश्न खड़ा करती है। देश की राजनीति में कई ऐसे उदाहरण देखने को मिले हैं।

प्रसिद्ध साहित्यकार फणीश्वरनाथ रेणु की रचना "मैला आँचल" और "पंचलाइट" इस संदर्भ में सटीक उदाहरण प्रस्तुत करती है। इस उपन्यास में ग्रामीण समाज की राजनीतिक असमानताओं और नेतृत्व की कमियों को गहराई से उजागर किया गया है। विद्यापति और भिखारी ठाकुर जैसे साहित्यकारों की रचनाओं में समाज की विसंगतियों और नेतृत्व की सीमाओं पर प्रकाश डाला गया है।

भिखारी ठाकुर की "बिदेसिया" में दिखाया गया है कि कैसे ग्रामीण समाज में एक मामूली गुण वाला व्यक्ति भी नेतृत्वकारी भूमिका में आ जाता है, और असली समस्याओं का समाधान नजरअंदाज कर दिया जाता है। इसी प्रकार से, जॉर्ज ऑरवेल की "एनीमल फार्म" में भी यह भाव दिखाई देता है, जहां थोड़े अधिक जानने वाले जानवर बाकी सभी पर हावी हो जाते हैं।

आर्थिक रूप से कमजोर समाज में भी इस लोकोक्ति की सच्चाई झलकती है। जब संसाधन सीमित होते हैं, तो थोड़ी सी आर्थिक प्रगति भी बड़ी उपलब्धि मानी जाती है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में, यह स्थिति उन देशों पर लागू होती है जो प्रौद्योगिकी या अर्थव्यवस्था में पिछड़े हुए हैं। यदि कोई देश थोड़ा सा भी प्रगति करता है, तो वह अन्य विकासशील देशों के लिए प्रेरणा बन जाता है, भले ही वह वैश्विक मानकों पर बहुत अधिक प्रभावी न हो।

बिहार की पृष्ठभूमि में, यह लोकोक्ति सामाजिक संरचना का प्रतिबिंब है। स्थानीय संदर्भ में, गांवों में यह स्थिति आम है, जहां शिक्षा और जानकारी के अभाव में एक साधारण व्यक्ति भी मार्गदर्शक बन जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर, यह स्थिति उन प्रशासकों और नेताओं की ओर इशारा करती है, जिनकी नीतियां सीमित दृष्टिकोण से बनाई जाती हैं।

यह कहावत हमें समझाती है कि जहां प्रतिस्पर्धा का स्तर निम्न हो, वहां साधारण प्रतिभा भी असाधारण प्रतीत होती है। आज के समय में, यह बात हर क्षेत्र में देखी जा सकती है। सोशल मीडिया पर एक व्यक्ति, जिसने थोड़ी-बहुत जानकारी प्राप्त की हो, तथ्यों को तोड़-मरोड़कर पेश कर देता है, और लोग उसे विशेषज्ञ मान लेते हैं। इसी तरह, राजनीति में जहां नेतृत्व कौशल का अभाव हो, वहां एक सामान्य नेता भी मसीहा बन जाता है।

जब हम इस कहावत को पर्यावरण के संदर्भ में देखते हैं, तो इसके कुछ गंभीर निहितार्थ सामने आते हैं। जब अधिकांश लोग पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में जागरूक नहीं होते, तो थोड़ी सी जानकारी रखने वाला व्यक्ति भी एक विशेषज्ञ की तरह माना जाता है। इससे पर्यावरणीय समस्याओं के वास्तविक समाधानों की बजाय, अक्सर अस्थायी या गलत उपायों को अपनाया जाता है। लोग व्यक्तिगत लाभ के लिए पर्यावरण को नुकसान पहुंचाते हैं और इसे सामान्य बात मानते हैं। उदाहरण के लिए एक शहर में जहां लोग कचरे के निस्तारण के बारे में जागरूक नहीं हैं, वहां कचरे को जलाकर उसका निस्तारण करने वाला व्यक्ति दूसरों के लिए एक उदाहरण बन सकता है, भले ही यह स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए हानिकारक हो।

"अन्हा गांव में कन्हा राजा" केवल एक लोकोक्ति नहीं, बल्कि समाज के लिए एक महत्वपूर्ण सबक है। यह हमें बताती है कि शिक्षा, जागरूकता, और नेतृत्व की गुणवत्ता को सुधारने की आवश्यकता है। इस कहावत का महत्व इसी में निहित है कि यह समाज को प्रेरित करती है कि वह नेतृत्व और प्रबंधन के लिए उच्च मानकों को अपनाए। आज के युग में, यह कहावत चेतावनी के रूप में काम करती है कि हमें केवल सीमित योग्यता से संतुष्ट नहीं होना चाहिए। हमें अपने समाज को जागरूक और शिक्षित बनाना चाहिए, ताकि सही मायने में योग्य लोग नेतृत्व करें।

इसलिए, "अन्हा गांव में कन्हा राजा" की स्थिति से बचने का एकमात्र तरीका शिक्षा, नेतृत्व और आत्म-सुधार पर ध्यान केंद्रित करना है। यही समाज और राष्ट्र को सशक्त बना सकता है।

अपना घरे बिलइओ बाघ

"अपना घरे बिलइओ बाघ" यह कहावत उस स्थिति को दर्शाती है जहां अपने घर में एक साधारण और कमजोर जीव भी शक्तिशाली और अधिकारपूर्ण महसूस करता है। इस कहावत का उपयोग अक्सर हास्यपूर्ण और चुटीले तरीके से किया जाता है, यह दर्शाने के लिए कि अपने घर में हर किसी को अधिकार और सत्ता प्राप्त होती है।

हर व्यक्ति अपने घर में अधिक सुरक्षित और सशक्त महसूस करता है। उदाहरण के लिए, एक बच्चा अपने घर में माता-पिता के सान्निध्य में खुद को सुरक्षित और समर्थ महसूस करता है। घर का वातावरण उसे आत्मविश्वास और स्वतंत्रता प्रदान करता है। यह स्थिति हमें सिखाती है कि घर का स्थान हर व्यक्ति के जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है और यह उसे शक्ति और अधिकार प्रदान करता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से, घर का वातावरण व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य और आत्म-सम्मान पर गहरा प्रभाव डालता है। अपने घर में व्यक्ति का आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास बढ़ता है। घर का यह सकारात्मक माहौल व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है और उसे मानसिक तनाव से बचाता है।

सामाजिक दृष्टिकोण से, यह कहावत हमें सिखाती है कि हर व्यक्ति अपने घर में एक विशेष प्रकार की सुरक्षा और अधिकार महसूस करता है। समाज में हर व्यक्ति अपने घर को अपने अधिकार और स्वतंत्रता का प्रतीक मानता है। उदाहरण के लिए, किसी साधारण व्यक्ति को समाज में शायद ही कोई विशेष अधिकार मिलता हो, लेकिन अपने घर में वह अपने नियम और नीतियां लागू कर सकता है। यह स्थिति हमें सिखाती है कि घर का स्थान हर व्यक्ति के लिए बहुत महत्वपूर्ण और शक्तिशाली होता है।

इतिहास में कई ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहां लोग अपने घर और क्षेत्र में सत्ता और अधिकार का अनुभव करते हैं। प्राचीन साम्राज्यों में, राजा और सम्राट अपने महलों और किलों में खुद को शक्तिशाली और अजेय मानते थे। उनके अपने क्षेत्रों में उनका वर्चस्व होता था और वे अपनी सत्ता का पूरा लाभ उठाते थे। यह स्थिति हमें सिखाती है कि अपने घर और क्षेत्र में हर कोई खुद को शक्तिशाली और अधिकारपूर्ण महसूस कर सकता है।

युद्ध के बंदियों की दुर्दशा "अपना घरे बिलइओ बाघ" कहावत के संदर्भ में गहरी और दुखद है। जब सैनिक युद्ध के दौरान दुश्मन के हाथों बंदी बना लिए जाते हैं, तो उनकी शक्ति और आत्मनिर्भरता छिन जाती है, और वे अमानवीय परिस्थितियों में शारीरिक और मानसिक यातनाओं का सामना करते हैं। इन बंदियों को अक्सर अपमानजनक और क्रूर तरीके से रखा जाता है, जिससे उनकी स्वतंत्रता और अधिकारों का उल्लंघन होता है। यह स्थिति न केवल उनके आत्म-सम्मान को क्षति पहुंचाती है, बल्कि उनके परिवारों और राष्ट्र का मनोबल भी गिराती है। युद्ध के बंदियों की यह पीड़ा हमें यह सिखाती है कि युद्ध के परिणाम कितने विनाशकारी हो सकते हैं, और कैसे शक्तिशाली सैनिक दुश्मन के हाथों में असहाय हो जाते हैं। "अपना घरे बिलइओ बाघ" कहावत इस परिप्रेक्ष्य में पूरी तरह सटीक प्रतीत होती है।

इस कहावत के संदर्भ में पड़ोसी देश पाकिस्तान का उदाहरण लिया जा सकता है। पाकिस्तान ने कई बार अपने घरेलू मुद्दों पर, जैसे कि कश्मीर को लेकर, भारत के खिलाफ अपने प्रभाव को बढ़ाने की कोशिश की है। घरेलू राजनीति में वह अपनी ताकत दिखाता है, लेकिन जब अंतरराष्ट्रीय मंच पर आता है, तो उसकी स्थिति या ताकत उतनी प्रभावशाली नहीं होती। पाकिस्तान अपनी सीमाओं के भीतर अपने नागरिकों या सैन्य बलों के बीच एक शक्तिशाली छवि बनाता है, लेकिन जब वैश्विक समुदाय में अपनी स्थिति को लेकर बात होती है, तो उसकी प्रभावशालिता कम हो जाती है। उदाहरण के तौर पर, पाकिस्तान ने कई बार कश्मीर मुद्दे पर भारत से भिड़ने की कोशिश की है, और घरेलू रूप से इसको लेकर एक मजबूत आवाज उठाई है, लेकिन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, खासकर संयुक्त राष्ट्र या अन्य वैश्विक मंचों पर, पाकिस्तान की स्थिति इतनी मजबूत नहीं रही है।

वर्तमान समय में, जब समाज में अस्थिरता और तनाव बढ़ रहा है, यह कहावत अत्यंत प्रासंगिक है। आज के दौर में, जब लोग बाहरी दुनिया की चुनौतियों से जूझ रहे हैं, घर का स्थान उन्हें सुरक्षा और समर्थन प्रदान करता है। यह स्थिति हमें सिखाती है कि घर का माहौल हर व्यक्ति के जीवन में अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है और यह उसे मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक रूप से सशक्त बनाता है।

एक साधारण व्यक्ति अपने घर में चाहे कितना ही शक्तिशाली और स्वायत्त क्यों न महसूस करे, शक्ति और जिम्मेदारी का वास्तविक अर्थ उससे परे होता है। यह हमें याद दिलाता है कि अपने घर की सीमाओं के भीतर, हम अपनी वास्तविक शक्तियों और कमजोरियों का सच्चा आकलन नहीं कर सकते हैं। हमें अपनी शक्तियों और जिम्मेदारियों का सही उपयोग और प्रबंधन भी करना चाहिए, ताकि समाज और दुनिया में सकारात्मक बदलाव आ सके। यह संतुलन हमें न केवल व्यक्तिगत, बल्कि सामूहिक रूप से भी प्रगति की ओर अग्रसर कर सकता है।

भारतीय समाज, संस्कृति एवं मूल्य

आध्यात्मिक उन्नति तथा शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए योग की आवश्यकता और महत्व

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

"योग, भारत की प्राचीनतम और अनमोल परंपराओं में से एक है, जो न केवल शारीरिक, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम है। भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है, **"योगः कर्मसु कौशलम्"** अर्थात योग से कर्मों में कुशलता आती है। यह कथन स्पष्ट रूप से यह इंगित करता है कि योग केवल एक व्यायाम नहीं है, बल्कि जीवन को संतुलित और पूर्ण बनाने का एक साधन है।

योग का उल्लेख भारतीय संस्कृति और सभ्यता में हजारों वर्षों से होता आ रहा है। प्राचीन ग्रंथों में, विशेष रूप से भगवद्गीता और उपनिषदों में, योग के विभिन्न स्वरूपों और इसकी महत्ता का विस्तार से वर्णन किया गया है। **महर्षि पतंजलि** ने योग को **"चित्त की वृत्तियों के निरोध"** के रूप में परिभाषित किया, जिसका उद्देश्य मनुष्य को अपने चित्त और इंद्रियों पर नियंत्रण करना और आत्मा के उच्चतम स्वरूप तक पहुँचाना है। उनके द्वारा प्रतिपादित अष्टांग योग, जिसमें यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि शामिल हैं, योग के समग्र अभ्यास का आधार है।

योग के माध्यम से शरीर को स्वस्थ और लचीला बनाया जा सकता है। विभिन्न योगासन जैसे ताड़ासन, भुजंगासन और वज्रासन शरीर की मांसपेशियों को मजबूत करते हैं और रक्त प्रवाह में सुधार करते हैं। इसके अलावा, प्राणायाम, जो श्वास पर आधारित योग तकनीक है, शरीर की ऊर्जा को संतुलित करता है। कपालभाति, अनुलोम-विलोम, और भ्रामरी जैसे प्राणायाम फेफड़ों की क्षमता को बढ़ाते हैं और शरीर के ऑक्सीजन स्तर को सुधारते हैं। आधुनिक युग में, जहाँ जीवनशैली जनित रोग जैसे मोटापा, हृदय रोग और मधुमेह तेजी से बढ़ रहे हैं, योग इन समस्याओं से बचने और उन्हें प्रबंधित करने में सहायक हो सकता है। योग न केवल शारीरिक बीमारियों को दूर करता है, बल्कि शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को भी मजबूत करता है।

तनाव और चिंता, आधुनिक युग की सबसे बड़ी समस्याएं हैं। तीव्र जीवनशैली, बढ़ती प्रतिस्पर्धा और मानसिक दबाव से मनुष्य मानसिक असंतुलन का शिकार हो रहा है। योग, विशेष रूप से ध्यान और प्राणायाम, मानसिक शांति और संतुलन प्राप्त करने में सहायक है। ध्यान का नियमित अभ्यास मन को शांत करता है और एकाग्रता को बढ़ाता है। जैसा कि श्री श्री रविशंकर ने कहा है, **"योग केवल आसनों तक सीमित नहीं है; यह भावनात्मक और मानसिक संतुलन का माध्यम है।"** जब व्यक्ति का मन शांत होता है, तब वह अपने विचारों और भावनाओं को बेहतर तरीके से समझ सकता है।

योग का अंतिम उद्देश्य आत्मा और परमात्मा के बीच संबंध स्थापित करना है। यह व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने और अपने सच्चे स्वरूप को पहचानने का अवसर प्रदान करता है। **स्वामी दयानन्द** ने कहा है कि **"जीवात्मा और परमात्मा का पूर्ण मिलन ही योग है।"** योग व्यक्ति को आत्मज्ञान की ओर ले जाता है, जहाँ वह बाहरी सुख-दु:ख से परे होकर आंतरिक शांति का अनुभव करता है।

भगवद्गीता में, योग को जीवन के विभिन्न पहलुओं में समाहित किया गया है। भगवान कृष्ण ने अर्जुन को कर्मयोग, ज्ञानयोग, और भक्तियोग के माध्यम से अपने कर्तव्यों को निष्पक्षता और समर्पण के साथ निभाने का संदेश दिया। यह दिखाता है कि योग केवल शारीरिक साधन नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के जीवन की हर गतिविधि में संतुलन और उद्देश्य प्रदान करता है।

बिहार योग विद्यालय की स्थापना 1963 में स्वामी सत्यानंद सरस्वती ने मुंगेर, बिहार में की। यह योग का एक आधुनिक और प्रतिष्ठित केंद्र है, जिसकी शिक्षाएं बिहार योग या सत्यानंद योग परंपरा के रूप में विश्वभर में प्रसिद्ध हैं। 2019 में, योग के प्रचार और विकास में उत्कृष्ट योगदान के लिए इसे प्रधानमंत्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया। वर्तमान समय में, जब लोग मानसिक, शारीरिक और सामाजिक तनाव का सामना कर रहे हैं, योग एक प्रभावी समाधान प्रस्तुत करता है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस घोषित किया गया।

आज योग केवल भारत तक सीमित नहीं है, विभिन्न देशों में योग को एक औषधीय और मानसिक उपचार के रूप में मान्यता मिली है। यह न केवल बीमारियों को ठीक करता है, बल्कि व्यक्ति को एक स्वस्थ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

योग, जीवन की एक पूर्ण और संतुलित शैली प्रदान करता है। यह केवल शारीरिक स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है; यह व्यक्ति के मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास का माध्यम भी है। जब व्यक्ति योग के माध्यम से अपने शरीर और मन को नियंत्रित करता है, तो वह अपनी आत्मा से जुड़ता है और जीवन के उच्चतम उद्देश्यों को प्राप्त करता है। भारतीय संस्कृति में योग का महत्त्व सदियों से रहा है और आज इसका प्रभाव पूरी दुनिया पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यह एक ऐसा साधन है, जो न केवल व्यक्तियों को बेहतर बनाता है, बल्कि समाज और विश्व को भी शांति, संतुलन और समृद्धि की ओर ले जाता है। योग के माध्यम से ही जीवन की वास्तविक उन्नति संभव है।

साहित्य ज्ञान का केवल एक स्रोत ही नहीं है, साथ ही यह नैतिक और सामाजिक क्रिया का भी एक रूप है।

(68वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

साहित्य मानव अनुभवों, भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति का अद्‌भुत माध्यम है। यह केवल एक ज्ञान का स्रोत नहीं है, बल्कि नैतिकता और सामाजिक क्रिया का प्रेरक भी है। साहित्य के माध्यम से न केवल मानवता के गूढ़ प्रश्नों का उत्तर खोजा जाता है, बल्कि यह समाज के नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों को भी सुदृढ़ करता है। यह एक ऐसा दर्पण है, जो समाज की वास्तविकता को दिखाने के साथ-साथ उसे सुधार के लिए प्रेरित भी करता है।

जब हम साहित्य को ज्ञान का स्रोत मानते हैं, तो यह समझना आवश्यक है कि इसका प्रभाव केवल तथ्यात्मक जानकारी तक सीमित नहीं है। साहित्य मानव मस्तिष्क को सोचने और विश्लेषण करने की क्षमता प्रदान करता है। प्राचीन काल से ही साहित्य ज्ञान और शिक्षा का आधार रहा है। वेद, उपनिषद, महाभारत और रामायण जैसे ग्रंथ केवल धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान ही नहीं देते, बल्कि उनमें नैतिकता, नेतृत्व, और सामाजिक न्याय के महत्वपूर्ण सबक भी समाहित हैं। महाभारत में यक्ष-प्रश्न के संवादों से जीवन के गूढ़ रहस्यों का बोध होता है, जबकि रामायण हमें मर्यादा और कर्तव्य का पाठ पढ़ाती है।

साहित्य का नैतिक पहलू उसकी सबसे प्रमुख विशेषताओं में से एक है। साहित्य में नैतिकता के मूलभूत तत्वों को उजागर किया जाता है, जो पाठकों को उनके जीवन में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, प्रेमचंद की कहानियां, जैसे "गोदान" और "ईदगाह," केवल सामाजिक समस्याओं को दिखाने तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि उनमें नैतिकता और करुणा का संदेश भी होता है। "ईदगाह" में छोटा बच्चा हामिद अपनी भूख और लालच को छोड़कर अपनी दादी के लिए चिमटा खरीदता है। यह कहानी न केवल प्रेम और त्याग की शिक्षा देती है, बल्कि यह नैतिकता और पारिवारिक मूल्यों को भी सुदृढ़ करती है।

साहित्य सामाजिक क्रांति और परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इतिहास गवाह है कि समाज में जब-जब असमानता और अन्याय बढ़ा है, तब-तब साहित्य ने क्रांति का बीज बोया है। फ्रांस की क्रांति में वोल्टेयर और रूसो के साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान था। भारत में, स्वतंत्रता संग्राम के दौरान साहित्य ने लोगों को जागरूक और प्रेरित किया। भारतेंदु हरिश्चंद्र, महात्मा गांधी और रवींद्रनाथ टैगोर जैसे साहित्यकारों ने अपने लेखन के माध्यम से देशभक्ति, स्वाधीनता और सामाजिक समानता का संदेश दिया। ष्वंदे मातरम्ष और "जन गण मन" जैसे गीतों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को नई ऊर्जा दी।

साहित्य की शक्ति इस बात में निहित है कि यह भावनाओं और संवेदनाओं के माध्यम से पाठकों के दिलों को छूता है। साहित्य केवल समस्या का चित्रण नहीं करता, बल्कि उसे समझने और समाधान ढूँढने का भी मार्ग दिखाता है। यह समाज के दबे-कुचले वर्गों की आवाज बनता है। दलित साहित्य इसका प्रमुख उदाहरण है, जिसने सदियों से उपेक्षित और शोषित समुदायों के दर्द और संघर्ष को सामने लाया। डॉ. अंबेडकर और महाश्वेता देवी जैसे लेखकों ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज में व्याप्त भेदभाव और असमानता को उजागर किया।

साहित्य केवल समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित नहीं करता, बल्कि यह पाठकों को उनके समाधान के लिए भी प्रेरित करता है। यह मनुष्य के भीतर एक संवेदनशील और उत्तरदायी नागरिक के रूप में उभरने की भावना पैदा करता है। जैसे प्रेमचंद के "गोदान" में, ग्रामीण जीवन की समस्याओं को उजागर करने के साथ-साथ इस बात पर बल दिया गया है कि आर्थिक और सामाजिक सुधारों के बिना समाज का विकास संभव नहीं है।

साहित्य मानवता के मूल्यों को सशक्त करता है। यह व्यक्ति को उसकी सीमाओं से बाहर निकालकर व्यापक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है। रवींद्रनाथ टैगोर की "गीतांजलि" में विश्व-बंधुत्व और मानवता का संदेश दिया गया है। टैगोर ने अपने साहित्य में बार-बार इस बात को रेखांकित किया है कि मानवता के उत्थान के लिए आपसी प्रेम और सौहार्द्र आवश्यक है।

आधुनिक युग में, जहाँ तकनीक और विज्ञान ने मानव जीवन को जटिल बना दिया है, साहित्य का महत्व और बढ़ गया है। यह मनुष्य को उसकी जड़ों से जोड़ता है और उसे यह याद दिलाता है कि भौतिक सफलता से अधिक महत्वपूर्ण है मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन। साहित्य हमें यह सिखाता है कि जीवन केवल उपलब्धियों का खेल नहीं है, बल्कि यह संवेदनाओं, नैतिकता और संबंधों की गहराई को समझने का नाम है। साहित्य का महत्व केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं है; यह समाज और राष्ट्र को भी प्रभावित करता है। यह विभिन्न संस्कृतियों के बीच पुल का काम करता है। साहित्य के माध्यम से हम न केवल अपनी संस्कृति को बेहतर ढंग से समझते हैं, बल्कि अन्य संस्कृतियों के प्रति सहानुभूति और सम्मान भी विकसित करते हैं।

अंततः, साहित्य ज्ञान, नैतिकता, और सामाजिक क्रिया का अनमोल साधन है। यह हमें सोचने, समझने और कार्य करने की प्रेरणा देता है। यह मानवता को उसकी गहराई में जाकर समझने और उसे एक बेहतर दिशा में ले जाने का माध्यम है। साहित्य के बिना जीवन अधूरा और नीरस है। यह केवल शब्दों का संग्रह नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी शक्ति है, जो समाज को जागरूक, प्रेरित और सशक्त बनाती है।

आधुनिक जटिल समाज न्याय के विभेदीकृत सिद्धांतों की मांग करता है

एक विश्वव्यापी समस्या के रूप में कोविड-19 ने कदम-कदम पर प्रशासकों की कुशलता के साथ ही विधियों तथा राजनैतिक सिद्धांतों की प्रभावशीलता का भी परीक्षण किया। इसने अलग-अलग वर्गों की अलग-अलग समस्याओं के प्रति संवेदनशीलता को उजागर कर दिया। जब इसे स्वास्थ्य समस्या के रूप में देखा गया तब बुजुर्गों तथा बच्चों के विशेष बचाव पर ध्यान केन्द्रित किया गया। फिर प्रवासी भारतीयों की वतन वापसी के लिए मिशन 'वन्देभारत' चला। एक धार्मिक समुदाय की पुरातनपंथी और प्रतिगामी रूढ़ियों से संघर्ष करना पड़ा। घरेलू हिंसा की बढ़ती शिकायतों से रूबरू होना पड़ा। सबसे बड़ी समस्या के रूप में प्रवासी मजदूरों की सामाजिक असुरक्षा तथा उनका अपनी जड़ों की ओर प्रयाण सामने आया।

एक महामारी ने सामाजिक तथा प्रशासनिक कमजोरियों को खोद-खोद कर बाहर निकाल दिया। ऐसे में अचानक ऑक्सफर्ड विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञानी 'डेविड मिलर' के सामाजिक न्याय सिद्धांत की ओर ध्यान गया, जिसका कहना है, ''बिकॉज माडर्न सोसायटीज आर कॉम्पलेक्स, द थ्योरी ऑफ जस्टिस मस्ट बी कॉम्पलेक्स टू।'' अर्थात जटिल होते समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप न्याय के सिद्धांतों को भी जटिल बनाए जाने की आवश्यकता है।

मिलर का सिद्धांत बहुआयामी मानकों की मांग करता है। इस रूप में यह जॉन रॉल्स के सामाजिक न्याय के एकआयामी सिद्धांत से अलग हो जाता है। मिलर तीन तथ्यों को सामाजिक न्याय प्रदान करने का आधार बताते हैं- गुण या खूबी (Desert), आवश्यकता (Need) तथा समानता (Equality)। समाज में समानता स्थापित करना किसी भी लोक कल्याणकारी राज्य का मुख्य उद्देश्य है। कवि 'रामधारी सिंह दिनकर' कुरुक्षेत्र कविता में कहते हैं-

''शांति नहीं तब तक जब तक,सुख-भाग न नर का सम हो
नहीं किसी को बहुत अधिक हो, नहीं किसी को कम हो।''

समाज में इस शांति की स्थापना के लिए ही रॉल्स सकारात्मक विभेदीकरण का सिद्धांत देते हैं। यह सिद्धांत कहता है कि किसी कमजोर, दलित या अन्त्यज को विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए विभेदीकरण करना न्यायसंगत है। इसी सिद्धांत का अनुसरण करके भारतीय संविधान में सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण का प्रावधान शामिल किया गया। मिलर इसके लिए बौद्धिक विभेदीकरण शब्द का उपयोग करते हैं। इससे तात्पर्य है कि विभेदीकरण वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर होना चाहिए। उनका मानना है कि विभेदीकरण एकजुट समाज (सालिडेरिस्टिक कम्यूनिटी) की 'जरूरतों' (Need) के अनुसार होना चाहिए। महिला समाज को काम के अवसर की समानता प्रदान करने के लिए उनकी प्रसूति आवश्यकताओं का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। इसीलिए जब मातृत्व लाभ अधिनियम, 2017 के माध्यम से मातृत्व अवकाश को 12 सप्ताह से बढ़ाकर 26 सप्ताह किया गया तो सामाजिक न्याय के चिंतकों ने आगे बढ़कर इसका स्वागत किया। अब तीसरे स्तर पर बात आती है डेजर्ट अर्थात गुण-दोष पर आधारित हकदारी की। सामाजिक स्तर पर ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जिसमें पुरस्कार तथा तिरस्कार की समुचित व्यवस्था हो। यदि कोई महिला संगीत में निष्णात है या उसकी रुचि है तो उसे इसके लिए उचित अवसर प्राप्त होने चाहिए। इस प्रकार समान लोगों के प्रति समान बरताव, आनुपातिक न्याय तथा विशेष जरूरतों का ध्यान रखकर समाज को महिलाओं के लिए न्यायपूर्ण बनाया जा सकता है।

भारत की विविधता इसे पहले से ही जटिल समाज बनाती है। भूमण्डलीकरण के दौर में तीव्र संक्रमणों ने इस जटिलता में वृद्धि भी है। लोक वृत्त तथा व्यक्तिगत वृत्त दोनों में ही संक्रमण तीव्र हुआ है। अकेले मनरेगा जैसी योजना ने कृषि मजदूरों की सोच तथा स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। उनकी आवश्यकताएं तेजी से बदल रही हैं। इसके अनुरूप बी.पी.एल. लाइन ही वास्तविक रूप में कल्याणकारी होगी। हमारे देश में किसान भले सबसे बड़ा कार्यकारी समूह हो लेकिन उसमें भी लघु, सीमांत तथा बड़े काश्तकार जैसे वर्गीकरण सरकार से अलग-अलग व्यवहार की अपेक्षा करते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना का व्यवहार सामाजिक न्याय से असंगत है। इस योजना के प्रावधानों में परिवर्तन कर लघु एवं सीमांत किसानों के बदले सभी किसानों को शामिल कर लिया गया। तात्पर्य है कि दो हेक्टेयर वाले किसान तथा बीस हेक्टेयर वाले किसान दोनों को ही बराबर 6000 रुपये वार्षिक की आर्थिक नकद सहायता प्राप्त होगी। यह योजना ऊपरी तौर पर भले समताकारी लगे परंतु पड़ले पर पहले से भारी बड़े किसानों की तरफ ही झुकी हुई है। इसके विपरीत ओडिशा सरकार की कालिया (KALIA) योजना को हम अधिक समावेशी कह सकते हैं जिसमें किसानों के अलग-अलग वर्गों के लिए अलग-अलग प्रावधान किए गए थे।

भारत में शहरी जनसंख्या का तेजी से प्रसार हो रहा है। इसमें सबसे बड़ी संख्या असंगठित मजदूरों की है। इनको अपनी सामाजिक सुरक्षा की चिंता है। संगठित श्रमिकों को अपने अधिकारों की चिंता है। व्यवसायिक मध्यम वर्ग को व्यवसायिक स्वतंत्रता की चिंता है। उद्यमियों को लालफीताशाही की चिंता है। सभी को ध्यान में रखने पर नये बनने वाले स्मार्ट सिटीज की स्मार्टनेस कसौटी पर खड़ी नजर आती है।

यह कसौटी सभी के लिए निर्वाहमूलक गरिमामय वातावरण निर्मित करने की है। इसे किसी एक सिद्धांत से क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। मानव के जटिल तथा संक्रमणशील व्यवहार को संबोधित करने वाले सिद्धांतों से ही प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है।

भारत में ऐसा देखा गया है कि आर्थिक स्थिति सामाजिक स्थिति का प्रतिफल होती है। अन्त्यज वर्ग की जन्म की दुर्घटनाओं को शमित करने के लिए जाति आधारित आरक्षण की व्यवस्था की गई। भारतीय समाज के सबसे कमजोर वर्ग को सामाजिक न्याय प्रदान करने की यह व्यवस्था सबसे सरल तथा प्रभावी है। समय के साथ इस व्यवस्था में आवश्यकता के पक्ष की उपेक्षा होने लगी। क्रीमी लेयर के अभाव से उत्पन्न समस्या को सर्वोच्च न्यायालय ने एम. नागराज केस (2006) में रेखांकित किया। यहां पर डेविड मिलर का सिद्धांत अधिक प्रासंगिक हो जाता है। सामाजिक समता प्रदान करने के लिए आवश्यकता तथा गुण-दोष पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

भारत की बहुलतावादी संस्कृति की चादर में सभी धागों का अपना विशिष्ट महत्व है। सभी को संरक्षण तथा प्रोत्साहन की आवश्यकता है। संथाल जनजातियों में सामुदायिक निर्माण की 'हलमा' परम्परा है जिसमें नजदीकी गांव के लोग अपना दाना-पानी लेकर आते हैं और मिलकर अपने एक सदस्य का निर्माण-कार्य कर देते हैं। ऐसी सुन्दर और समृद्ध परंपराएं किसी सामान्यीकृत सिद्धांत से प्रबंधित नहीं हो सकतीं।

विभिन्न राज्यों में प्रवासी प्रतिक्रिया में भूमिपुत्र की प्रकृति के उभार में भी हम स्थानीय परंपराओं तथा प्राथमिकताओं की उपेक्षा देख सकते हैं। खास बात यह है कि यह उपेक्षा दोनों सिरों पर है। स्रोत तथा गंतव्य दोनों ही स्थानों पर संसाधनों के प्रबंधन का अभाव है। इन्हें अलग-अलग आर्थिक व्यवहार ही प्रबंधित कर सकते हैं। परंतु ऐसे विभेदीकृत सिद्धांत की अपनी समस्याएं भी हैं। पहली बात तो यह है कि किसी भी समूह की इच्छा उसके सदस्यों की इच्छा का सटीक समुच्चय कभी नहीं होती। उसके सदस्य व्यक्तिनिष्ठ इकाई है उनका अपना मनोविज्ञान होता है। उसके अनन्त व्यवहार के लिए अनन्त सिद्धांतों का निर्माण करना असंभव होता है।

दूसरी बात ऐसे व्यक्ति जो किसी भी समूह में शामिल नहीं हैं, उनको प्रशासकीय नीतियों से लाभान्वित करना कठिन होता है। कई बार कोई समूह दो वर्गों में शामिल होने की योग्यता रखता है जैसे महिलाओं को उर्ध्वाधर आरक्षण में रखा जाय अथवा क्षैतिज आरक्षण में इस पर लगातार असमंजस की स्थिति बनी रहती है। लोक वृत्त तथा व्यक्तिगत वृत्त को पूर्णत: अलग करना भी संभव नहीं होता है क्योंकि वास्तव में एक ही व्यक्ति दोनों ही वृत्तों का सदस्य होता है। उसके निजी व्यक्तित्व का प्रभाव ही उसके व्यवहार को निर्धारित करता है।

भारतीय परंपरा अखण्डमण्डालाकार की संकल्पना से पोषित होती रही है। इसके अनुसार एक स्पाईरलनुमा संरचना में व्यक्ति, उसका परिवार, समाज, राष्ट्र, विश्व और ब्रह्मांड जुड़े होते हैं। इसी संकल्पना से प्रेरित होकर पण्डित दीनदयाल उपाध्याय 'एकात्म मानव दर्शन' का विचार प्रस्तुत करते हैं। वे राज्य तथा समाज की सभी व्यवस्थाओं की सार्थकता इसी एकात्मकता को साधने में मानते हैं।

प्रतिस्पर्द्धा की प्रवृत्ति ने मानव के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके लिए उदारवादी नियंत्रण मुक्त व्यवस्था की मांग करते हैं। इसलिए सामाजिक न्याय के बौद्धिक विभेदीकरण को उदारवादी नैसर्गिक विकास की प्रक्रिया में अवरोधक के रूप में देखते हैं।

ओ.ई.सी.डी. के अनुसार आज दुनिया की 85 प्रतिशत सम्पत्ति ऊपर के 10 प्रतिशत लोगों के पास है। ऐसे में दुनिया को प्रतिस्पर्द्धा के भरोसे छोड़ना अमानवीयता है। आज के जटिल विश्व में दर्शन को अनुभव तथा तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। अनुभव यह कहता है कि समावेशी विकास के माध्यम से ही सामाजिक शांति को पाया जा सकता है। समावेशी विकास की प्रक्रिया में सामाजिक न्याय का सिद्धांत सबसे सफल विचार है। डेविड मिलर के सामाजिक न्याय का सिद्धांत न्याय को सन्दर्भत: ग्रहण करता है। अर्थात किस परिस्थिति में न्याय कैसा होगा इसे वह अलग-अलग निर्धारित करता है। नित परिवर्तनशील वर्तमान समाज में ऐसा ही सिद्धांत प्रासंगिक भी है।

कोविड-19 समस्या के संदर्भ में दुनिया को एहसास हो गया कि आज हमें व्यवहारिक राजनीतिक विचारों की ही आवश्यकता है जो आर्थिक भूमण्डलीकरण के साथ ही साथ राजनीतिक बहुसंस्कृतिवाद को भी साध सके। ऐसा सिद्धांत जो इतना लचीला हो कि प्रवासी भारतीय से लेकर प्रवासी मजदूरों तक की समस्या का समाधान कर सके जिससे चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी न्यायपूर्ण समाज की स्थापना हो सके। डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार, **"न्यायपूर्ण समाज वह है, जिसमें परस्पर सम्मान की बढ़ती हुई भावना और अपमान की घटती हुई भावना मिलकर एक करुणा से भरे समाज का निर्माण करे।"** डेविड मिलर समता, आवश्यकता तथा डेजर्ट के माध्यम से ऐसी परिस्थिति ही निर्मित करते हैं।

क्या समाज में व्याप्त असहिष्णुता मॉब लिंचिंग का कारण है?

असहिष्णुता, सहिष्णुता का ठीक विपरीतार्थक शब्द है जिससे एक इन्सान या समुदाय की सहनशीलता के अभाव का बोध होता है। जब कोई व्यक्ति अपने पूर्वाग्रहों के कारण किसी अन्य विचार, सिद्धांत, भाषा, धर्म या व्यक्ति के अस्तित्व को सहर्ष स्वीकार करने को तैयार नहीं होता तो ऐसी मनोवृत्ति को ही असहिष्णुता कहा जाता है।

मुख्य रूप से धर्म के क्षेत्र में तो असहिष्णुता पायी ही जाती है; साथ ही परिवार, समाज और राजनीतिक जीवन में भी असहिष्णुता दिखाई दे जाती है। आज तेजी से हो रहे पारिवारिक विघटन के मूल में इसके सदस्यों का अपने-अपने योगदान और अधिकार के प्रति अहम के कारण टकराव ही अलगाव उत्पन्न करता है। इसी प्रकार समाज में जाति, धर्म आदि के अपने-अपने पूर्वाग्रहों, अपेक्षाओं, वंचनाओं के कारण भी संघर्ष और टकराव उत्पन्न हो रहे हैं। बंगाल के चुनाव में राजनीतिक हिंसा, राजनीतिक असहिष्णुता का ही उदाहरण है।

असहिष्णुता का एक सामान्य अर्थ जान लेने के बाद सहिष्णुता को भी समझ लेना आवश्यक है, जिसे हम इस तरह कह सकते हैं कि यदि हम अपने धर्म, संप्रदाय, विचार, सिद्धांत, रीति-रिवाज से भिन्न किसी अन्य व्यक्ति या समुदाय की इन्हीं प्रवृत्तियों को स्वीकार कर सकें, उनके प्रति परस्पर विरोध या शत्रुता की भावना न रखें तो हम अपने को सहिष्णु कह सकते हैं।

समाज में असहनशीलता की बढ़ती प्रवृत्ति, जिससे एक सामूहिक रूप से असहिष्णु लोगों की भीड़ बनती और बढ़ती जा रही है, जो भीड़ हिंसा या मॉब लिंचिग के रूप में सामने आ रही है। यह भीड़ समाज के ताने-बाने, उदारवादी संस्कृति, मिलजुलकर रहने की परंपरा पर चोट पहुंचा रही है। समायोजन और समन्वय की जगह क्रोध, सामूहिक विरोध, हिंसक आचरण के तरीकों को अपनाना आम बात हो गई है। आज असहिष्णुता का माहौल, इतना तेजी से बढ़ रहा है कि सहिष्णुता की चेतना निर्माण की प्रक्रिया की गति कम होती दिख रही है।

"हसन नाम जानलेवा हो सकता है,
अमृत यह नाम भी निरापद नहीं रहा,
बहुत सुरक्षित नहीं हैं आप,
महंगू नाम के साथ,
बलबीर सिंह नाम के खतरे तमाम हैं,
इस तंत्र में सिर्फ आपका नाम,
आपकी हत्या का सबब हो सकता है।"

देवी प्रसाद मिश्र की यह कविता वर्तमान समय के समाज की असहिष्णुता परक सामाजिक प्रक्रिया का सच बयां कर रही है। यद्यपि मॉब लिंचिग समाज में पहले भी होती रही है, जिसमें कभी किसी स्त्री को डायन बताकर मार डालना, कभी किसी चोर को भीड़ द्वारा पकड़े जाने पर पीट-पीट कर मार डालना, तो कभी गुजरात दंगे व सिख दंगे जैसे प्रकरण मॉब लिंचिंग के उदाहरण के रूप में अक्सर सामने आते रहे हैं। लेकिन हाल की कुछ घटनाएं समाज की एक ज्यादा खतरनाक प्रवृत्ति दर्शा रही है; जैसे अखलाक को घर में गाय के मांस के लिए और पहलू खां को गौ तस्कर समझ कर मार डाला गया। जय श्री राम न बोलने के लिए पीटने जैसी घटनाएं महज घटनाएं नहीं; अल्पसंख्यक, बहुसंख्यकों के बीच बढ़ती खायी और बदलती मनोवृत्ति को दर्शा रही है। ऐसे में प्रश्न उठता है कि उन लोगों को मारने-पीटने वाली भीड़ आ कहां से रही है, इनकी ये मनोवृत्ति बन कैसे रही है?

कहीं न कहीं ये घटनाएं इसलिए भी हो रही हैं क्योंकि यह भीड़ इन घटनाओं को ही उचित माध्यम मान रही है। विशेषज्ञों का कहना है कि ऐसी घटनाओं में भीड़ के नायकत्व के रूप में दो लक्षण दिखाई देते हैं, पहला तो बहुसंख्यक निर्णय, वैधता को स्थापित करता दिखता है जहां उसकी परंपरा, रीति-रिवाज ही उसे सही लगते हैं, भीड़ की मानसिकता यह होती है कि अन्य भी इसे मानें। चाहे पूरा शरीर ढकने वाले परिधानों की वहनीयता हो या खान-पान की वस्तुओं का निर्णय। इन्हें पूरा करने के लिए भीड़, हिंसा को व्यावहारिक स्वत: स्फूर्त और आवश्यक मानती है। कठुआ जैसे मामले में अभियुक्तों का बचाव करना साबित करता है कि भीड़ खुद ही न्याय और नैतिकता के दायरे तय करना चाहती है। ऐसी भीड़ तानाशाही व्यवस्था को ही प्रतिबिम्बित करती है; जो बौद्धिक समाज के सोचने समझने की क्षमता को कम कर देती है।

भीड़ का एक दूसरा चेहरा या लक्षण भी है, जो बच्चा चोरी, बलात्कार या अन्य किसी भी प्रकार के आपराधिक कृत्य की सजा देने की भावना से जुड़ी होती है। इसमें किसी समुदाय को नुकसान पहुंचाना नहीं, बल्कि दोषी को सजा देना उद्देश्य होता है।

इस तरह की हिंसा में लोगों के गुस्से को हवा देने में अफवाह की भूमिका अहम होती है, जिसका आज सबसे आसान माध्यम सोशल मीडिया जैसी तकनीक है। अफवाह का असर बहुत तेज होता है। त्रिपुरा में बच्चे उठाने के शक में तीन लोगों की हत्या इसी

आधारहीन अफवाह के कारण हुई। प्रायः हिंसा के मामलों में भीड़, अपना क्रोध अभिव्यक्त कर तो रही है, लेकिन उसे उकसाने वाली सूचना और मोबाइल पर आने वाले वीडियो को जांचने-परखने का धैर्य नहीं दिखाती; यह भीड़ सच्ची और झूठी खबरों में अन्तर नहीं कर पा रही है।

अफवाहों को हवा देने और आग भड़काने का काम राजनीतिक और धार्मिक नेतागण भी खूब कर रहे हैं। कहीं किसी नेता का कहना है कि पुलिस को 15 मिनट के लिए हटा दिया जाए, तो कोई कहेगा जिन्हें राष्ट्रगान न गाना हो पाकिस्तान चला जाये। तो कभी मॉब लिंचिंग में सजा पाये लोगों को कोई मंत्री माला पहनाकर स्वागत कर रहा है। ऐसी बातें एक तरफ लोगों की मनोदशा और मनोवृत्ति को अपने धर्म के प्रति संकीर्ण बना रही हैं दूसरी तरफ अन्य धर्म के प्रति नफरत और घृणा के भाव को गाढ़ा कर रही हैं।

समाज में जब तर्क और विवेक की जगह रूढ़ियों, अंधविश्वास और भीड़ की सोच हावी होती है, तो लोग जानबूझकर भी कानून तोड़ते हुए हत्या जैसी हिंसा को अंजाम देते हैं। डायन हत्या, गौमांस के कारण हत्या, विजातीय विवाह के कारण हत्या, इन सब में यही भावना निहित होती है कि हमारी परंपरा, रीति-रिवाज बिल्कुल सही हैं, उसे तोड़ने वालों को सजा देने का उनका कर्त्तव्य है, भले ही सरकारी कानून उस मसले पर कुछ और मानता हो। इसके अन्दर एक डर पैदा होने की सोच छुपी होती है।

कुल मिलाकर आज समाज में घटती सहिष्णुता की भावना, भीड़ की बढ़ती हिंसक प्रवृत्ति, समाज और सरकार के समक्ष एक डरावनी एवं चिंतित करने वाली तस्वीर पेश कर रही है।

'विविधता में एकता' भारतीय समाज की हमेशा से एक महत्वपूर्ण विशेषता रही है। ईसाई और इस्लाम के अस्तित्व में आने से पहले ही भारत की सनातन संस्कृति में आध्यात्मिक, बौद्धिक, दार्शनिक स्तर पर कई विपरीत विचारधारायें पनपीं, लेकिन इस विचार प्रवाह का वाहक ऐसी ऋषि परंपरा रही, जो विचारों, अभिव्यक्ति और अस्तित्व की स्वतंत्रता को महत्व देते थे। भारत में परस्पर विरोधी दर्शन एक साथ मौजूद रहे। यहां उपनिषदों का सम्मान और आदर करने वाले तथा इनका विरोध करने वाले दोनों ही आपस में शास्त्रार्थ करते थे। ''एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति'' यानी ईश्वर एक है, लोग इसे भिन्न-भिन्न नामों से जानते हैं; ऐसा ऋग्वेद में हजारों बरस पहले ही बता दिया था। लेकिन आज भारत की यही समावेशी प्रकृति खतरे में पड़ रही है। भीड़ तंत्र, इत्मिनान से अपने क्रोध के शिकार को ढूंढ रही है। आजकल लिंचिंग, अल्पसंख्यकों या अलग राय रखने वालों के खिलाफ एक हथियार बन गया है।

ऐसी प्रवृत्ति समाज में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न कर रही है और राजनीतिक रूप से बहुमत की तानाशाही का निर्माण कर रही है। ऐसे हालात में देश की विघटनकारी और अलगाववादी प्रवृत्तियों को ही ताकत मिलती है, न कि सशक्त संगठित समाज का निर्माण करने वाली प्रवृत्ति को।

यद्यपि सरकार ने लिंचिंग जैसी घटनाओं की निंदा की है; अधिकारियों से मामलों की सख्ती से जांच करने को कहा है। लेकिन स्थिति में कोई खास बदलाव आता नहीं दिख रहा है, जो कि समाज निर्माण के लिए खतरा है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को भीड़ के हमलों और लिंचिंग से मुकाबला करने के लिए नए कानून बनाने और उनका सही क्रियान्वयन करने का निर्देश दिया।

असहिष्णुता, डर व अधैर्य की मनोवृत्ति समाज की जड़ों में पहुंचकर उसे दीमक की तरह खोखला न कर दे, उससे पहले आलोचनात्मक शक्ति और चिंतनशील लोगों को स्वयं को जगाना होगा और अन्य लोगों में भी उदारवादी भावना का संचार करना होगा।

नेल्सन मंडेला का महत्वपूर्ण कथन है कि, ''किसी ने भी दूसरे इंसान की त्वचा का रंग पहचानकर या उसके वर्ग और धर्म के आधार पर नफरत करते हुए जन्म नहीं लिया है, लोग समय के साथ बाद में नफरत करना सीख जाते हैं, अगर नफरत सीखा जा सकता है तो प्रेम करना भी सीखा जा सकता है; क्योंकि प्रेम को मनुष्य के हृदय में आसानी से प्रवेश कराया जा सकता है।''

प्रेम की यह शुरुआत परिवार के स्तर से ही की जानी चाहिए। हर माता-पिता को अपने बच्चों को दूसरों के प्रति मैत्री और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार की शिक्षा देनी चाहिए। कभी भी बच्चों से दूसरे धर्मों के प्रति घृणा या नफरत की बातें नहीं करनी चाहिए। हर धर्म के सम्मान की भावना प्रदर्शित करनी चाहिए। व्यक्ति को दूसरे धर्मों की शिक्षा को भी अधिक से अधिक जानने समझने का प्रयास करना चाहिए।

महात्मा गांधी ने कहा है कि ''अगर हम लोकतंत्र की सच्ची भावना का विकास करना चाहते हैं, तो हम असहिष्णु नहीं हो सकते।'' कहने का तात्पर्य है कि सरकारों, राजनीतिक दलों और समाज को यह समझना होगा कि सिर्फ भाषणों में लोकतंत्र और इसकी खूबी का बखान करने से यह नहीं मिल जायेगा। समाज के जीवन में लोकतंत्र को उतारना है तो सहिष्णुता को व्यक्ति और समाज के आवश्यक गुण के रूप में स्वीकारना होगा और उसका प्रसार करना होगा। धर्म रक्षकों को दलाई लामा का यह संदेश समझना होगा कि ''सहिष्णुता और धैर्य को कमजोरी की निशानी नहीं समझा जाना चाहिए, ये तो शक्ति का चिह्न है।''

सामाजिक न्याय

भारत में दहेज प्रथा विरोधी कानून और उनकी प्रभावशीलता

दहेज प्रथा भारतीय समाज की उन पुरातन सामाजिक बुराइयों में से एक है, जिसकी जड़ें वैदिक काल से जुड़ी हुई हैं। प्रारंभिक समय में विवाह संस्कार एक पवित्र और धार्मिक कार्य माना जाता था। 'कन्यादान' को महान पुण्य का कार्य समझा जाता था, और इसे तभी पूर्ण माना जाता था, जब दूल्हे को दक्षिणा दी जाती थी। इसे 'वरदक्षिणा' कहा गया, जो दुल्हन के परिवार द्वारा स्वेच्छा से दी जाती थी। परंतु वरदक्षिणा का स्वरूप बिगड़कर दहेज में बदल गया, जो अब महिलाओं के जीवन में शोषण और उत्पीड़न का कारण बन गया है।

दहेज प्रथा की शुरुआत भले ही एक धार्मिक परंपरा के रूप में हुई हो, लेकिन इसका दुरुपयोग धीरे-धीरे समाज में गहराई तक पैठ बना चुका है। उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में, इस बुराई के खिलाफ कई समाज सुधारकों ने आवाज उठाई। इस प्रथा ने न केवल महिलाओं के अधिकारों का हनन किया, बल्कि उन्हें मानसिक और शारीरिक शोषण का शिकार बनाया। स्वतंत्रता पूर्व भारत में बिहार और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों ने इसे रोकने के लिए कानून बनाए। बिहार दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1950 और आंध्र प्रदेश दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1958 इस दिशा में शुरुआती प्रयास थे। हालांकि, इन कानूनों का प्रभाव सीमित रहा, क्योंकि दहेज जैसी प्रथाएं समाज में गहराई तक जमी हुई थीं।

1959 में, दहेज प्रथा को रोकने के उद्देश्य से 'दहेज निरोधक विधेयक' लोक सभा में पेश किया गया। विधेयक में संशोधन और बहस के बाद इसे 1 मई 1961 को 'दहेज प्रतिषेध अधिनियम' के रूप में पारित किया गया। यह अधिनियम एक ऐतिहासिक कदम था, जिसने दहेज लेने, देने और मांगने को कानूनी अपराध घोषित किया। दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 के अनुसार, दहेज में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से दी गई संपत्ति या मूल्यवान वस्तुएं शामिल हैं। इसके तहत दहेज लेना, देना और इसके लिए उकसाना दंडनीय अपराध हैं। दहेज लेने और देने पर कम से कम पाँच वर्ष की कैद और जुर्माने का प्रावधान है। वहीं, दहेज मांगने पर छह महीने से दो वर्ष तक की कैद और जुर्माने का प्रावधान किया गया। इसके अतिरिक्त, दहेज से संबंधित किसी भी प्रकार के विज्ञापन पर प्रतिबंध लगाया गया।

इस अधिनियम के अलावा भारतीय दंड संहिता और भारतीय साक्ष्य अधिनियम में भी प्रावधान जोड़े गए। आईपीसी की धारा 304-B के तहत दहेज मृत्यु को परिभाषित किया गया है। विवाह के सात वर्ष के भीतर यदि किसी महिला की मृत्यु संदिग्ध परिस्थितियों में होती है, तो इसे दहेज उत्पीड़न का परिणाम माना जाता है। धारा 498-A के तहत पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा महिला पर क्रूरता को दंडनीय अपराध घोषित किया गया। वहीं, भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 113-B के तहत दहेज मृत्यु के मामलों में अभियुक्त के खिलाफ साक्ष्य जुटाने का प्रावधान किया गया है।

इन कानूनों के बावजूद, दहेज प्रथा आज भी समाज में गहराई से व्याप्त है। इसका मुख्य कारण पितृसत्तात्मक मानसिकता और सामाजिक मान्यताएं हैं। भारतीय समाज में विवाह को प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता है, जहाँ दहेज को वैभव और सामाजिक रुतबे से जोड़ा जाता है। कानूनों की प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारणों में समाज की स्वीकृति, कानूनी प्रक्रियाओं की जटिलता, और कानून के दुरुपयोग की घटनाएं शामिल हैं। कई बार दहेज विरोधी कानूनों का दुरुपयोग भी हुआ है, जिससे इनकी विश्वसनीयता पर सवाल खड़े हुए हैं।

दहेज प्रथा को समाप्त करने के लिए केवल कानून बनाना पर्याप्त नहीं है। इसके लिए समाज में व्यापक जागरूकता अभियान चलाने की भी आवश्यकता है। स्कूलों और कॉलेजों में बच्चों को दहेज प्रथा के दुष्प्रभावों के बारे में शिक्षित करना चाहिए। महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हें शिक्षा और रोजगार के अवसर प्रदान करना आवश्यक है। जब महिलाएं आर्थिक रूप से स्वतंत्र होंगी, तो वे सामाजिक दबाव का सामना करने में सक्षम होंगी। कई राज्य सरकारों ने सरकारी कर्मचारियों के लिए दहेज न लेने का शपथ-पत्र अनिवार्य किया है। इसके साथ ही सामूहिक विवाह समारोहों और दहेज मुक्त विवाह को प्रोत्साहित करना भी समाज में सकारात्मक बदलाव ला सकता है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में सरकार ने 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान के माध्यम से महिलाओं की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया है। इस अभियान का उद्देश्य न केवल महिलाओं को सशक्त बनाना है, बल्कि समाज में उनके प्रति सम्मान और समानता की भावना विकसित करना भी है। दहेज प्रथा के खिलाफ लड़ाई केवल कानूनों तक सीमित नहीं रह सकती। इसके लिए समाज के हर वर्ग को जागरूक होना पड़ेगा और अपनी सोच में बदलाव लाना होगा।

निष्कर्षत: दहेज प्रथा एक सामाजिक और सांस्कृतिक समस्या है, जो कानूनों के बावजूद आज भी बनी हुई है। इसे समाप्त करने के लिए कानूनों के साथ-साथ समाज में बदलाव लाने की आवश्यकता है। जब तक समाज इस प्रथा को अस्वीकार नहीं करेगा और महिलाओं को समानता और सम्मान का जीवन नहीं मिलेगा, तब तक इस समस्या का समाधान कठिन रहेगा। दहेज प्रथा के उन्मूलन के लिए समाज और सरकार को मिलकर काम करना होगा। महिलाओं को समान अधिकार देकर और समाज में उनकी स्थिति को सुधारकर ही इस प्रथा को समाप्त किया जा सकता है।

घरेलू हिंसा: एक बड़ी सामाजिक चुनौती

"कई महिलाओं व लड़कियों के लिए सबसे ज्यादा खतरा तब होता है जब वो अपनी सबसे सुरक्षित जगह पर होती हैं, यानी अपने घर में।" - एंटोनियो गुटेरेस

संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस के अनुसार कोविड-19 महामारी के प्रसार के पश्चात पूरे विश्व में घरेलू हिंसा में बढ़ोत्तरी देखी गई है। भारत के संदर्भ में बात की जाए तो 24 मार्च से अप्रैल 2020 के दूसरे सप्ताह तक महिलाओं के विरुद्ध 257 अपराध की शिकायतें दर्ज की गई, जिसमें से 69 घरेलू हिंसा से संबंधित मामले हैं। ऐसा तब हो रहा है जब सम्पूर्ण विश्व महिला अधिकार एवं लैंगिक समानता से संबंधित 'बीजिंग प्लेटफॉर्म फॉर एक्शन ऑन विमेन्स राइट एंड जेंडर इक्वलिटी' कार्यक्रम के प्रभाव में आने की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है।

घरेलू हिंसा परिवार के सदस्य के द्वारा की जाती है अत: इसके अधिकतर मामले प्रकाश में नहीं आ पाते। यह लिंग आधारित हिंसा होती है जो पुरुषों द्वारा महिलाओं पर बल के प्रदर्शन एवं संतुलन बनाए रखने के लिए की जाती है। आमतौर पर यह हिंसात्मक एवं बल का अव्यावहारिक प्रदर्शन होता है। इसके अंतर्गत शारीरिक दुर्व्यवहार, मौखिक दुर्व्यवहार, आर्थिक दुर्व्यवहार, भावनात्मक दुर्व्यवहार, लैंगिक दुर्व्यवहार आदि को शामिल किया जाता है। सदियों से बनी धारणाएं एवं चली आ रही मानसिकता घरेलू हिंसा का सबसे बड़ा कारण है। स्त्री और पुरुष के बीच असमानता को बढ़ाने वाले बहुत से कारक आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक ढांचे से उत्पन्न हुए हैं। स्त्रियों की यह मानसिकता बना दी गई है कि उसे पुरुष के अधीन रहना है। स्त्रियां विवाह से पहले अपने पिता एवं भाई के अधीन रहती हैं और विवाह के पश्चात अपने पति के अधीन रहने लगती हैं। यह मानसिकता पितृसत्तात्मक समाज की देन है। ऐसे समाज में महिलाओं को पुरुषों से निम्न एवं कमजोर माना जाता है।

महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच भी काफी कम है। लड़की के जन्म लेते ही मां-पिता को उसकी शादी के लिए पैसा इकट्ठा करने की ज्यादा चिंता होती है न कि बेहतर शिक्षा दिलाने की। इसके अलावा महिला अगर शिक्षित भी है तो उसे अच्छे वेतन वाली नौकरी करने की स्वतंत्रता भी नहीं रहती। मुश्किल से अगर नौकरी कर भी ले तो उसे विभिन्न पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण नौकरी त्यागना पड़ता है। इसका प्रभाव उसके व्यावसायिक जीवन तथा सामाजिक प्रस्थिति दोनों पर पड़ता है। महिलाओं के प्रति रूढ़िवादी दृष्टिकोण एवं उन्हें प्राकृतिक अधिकारों से वंचित रखना घरेलू हिंसा को बढ़ावा देता है। घरेलू हिंसा के शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक दुष्परिणाम होते हैं। इसके कारण महिलाओं का अंग भंग, मृत्यु, दहेज हत्या जैसी घटनाएं आमतौर पर सुनने को मिलती हैं। महिलाओं के शारीरिक एवं मानसिक प्रताड़ना का परिणाम कई बार आत्महत्या के रूप में भी सामने आता है। मानसिक प्रताड़ना विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगों का भी कारण बनती है, जिससे अवसाद, द्विध्रुवीयता जैसे रोग व गंभीर स्थिति में सिजोफ्रेनिया भी हो सकता है। घरेलू हिंसा इनके कार्य करने तथा निर्णय लेने की क्षमता पर भी नकारात्मक प्रभाव डालती है।

घरेलू हिंसा की व्यापकता को देखते हुए इसके निवारण से संबंधित प्रावधान भी बहुस्तरीय रूप में अपनाये जा रहे हैं। इसमें संवैधानिक प्रावधान से लेकर सामाजिक एवं लैंगिक समानता को बढ़ावा देने वाले उपाय शामिल हैं। संविधान, स्त्री एवं पुरुष में सामाजिक एवं लैंगिक भेदभाव को हतोत्साहित करता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15 (3) सरकार को यह अधिकार देता है कि महिलाओं के कल्याण के लिए विशेष उपबंध करे जिससे कि उनकी उन्नति हो।

भारतीय दंड संहिता की धारा 304बी दहेज संबंधी अपराध पर नियंत्रण लगाती है। भारतीय दंड संहिता की धारा 498ए पति या रिश्तेदार द्वारा मानसिक या शारीरिक दोनों तरह की क्रूरता के निवारण से संबंधित है। ऐसे अपराध को संज्ञेय एवं गैर-जमानती माना जाता है। घरेलू हिंसा से संरक्षण के लिए 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005' लाया गया। यह अधिनियम अक्टूबर 2006 से क्रियान्वित है। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं के संवैधानिक एवं वैधानिक अधिकारों का प्रभावी संरक्षण करना है। इसके अलावा सरकार द्वारा अनेक नीतिगत पहल की गई हैं। महिला कल्याण को बढ़ावा देने के लिए महिला आयोग की स्थापना की गई है। इन सब के सम्मिलित प्रभाव के फलस्वरूप 1950 के पश्चात महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है और महिलाएं घरेलू हिंसा के विरुद्ध आवाज बुलंद भी कर रही हैं।

परन्तु इन सबके बावजूद घरेलू हिंसा एक प्रमुख चुनौती बनी हुई है। घरेलू हिंसा के तहत दर्ज मामलों में सजा की दर काफी कम है, अत: पुलिस एवं न्यायपालिका दोनों के कर्मियों को उचित प्रशिक्षण एवं महिलाओं से संबंधित समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाए जाने की आवश्यकता है। इसके साथ ही समाज के हरेक वर्ग, खासकर बच्चों को लैंगिक रूप से संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। महिलाओं से संबंधित घरेलू हिंसा का मुद्दा भारत के 50 प्रतिशत जनसंख्या से संबंधित मुद्दा है। बिना इसके समाधान के देश एवं समाज के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। शास्त्रों में भी कहा गया है-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफला: क्रिया:।" (मनुस्मृति 3/56)

महिला सशक्तीकरण

महिला सशक्तीकरण की वर्तमान स्थिति: राजनैतिक सशक्तीकरण के परिप्रेक्ष्य में

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

महिला सशक्तीकरण, विशेष रूप से उनका राजनैतिक सशक्तीकरण, एक प्रगतिशील समाज की पहचान है। भारत, जो दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, महिलाओं को राजनीति में समान भागीदारी देने के प्रयासों में लगातार सुधार कर रहा है। हालांकि, यह प्रक्रिया धीमी और चुनौतियों से भरी रही है। वर्तमान में, महिला सशक्तीकरण का राजनैतिक परिप्रेक्ष्य भारतीय लोकतंत्र के समक्ष एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है। संसद और विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक जटिल मुद्दा है। लोक सभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 2004 तक 5-10% था, जो वर्तमान में 18वीं लोकसभा में 13.6% हो गया है। राज्य सभा में यह आंकड़ा 13% है। यह वृद्धि एक सकारात्मक संकेत है, लेकिन यह वैश्विक औसत 25% से अभी भी बहुत पीछे है। 1957 में केवल 45 महिलाओं ने लोक सभा चुनाव लड़ा था, जबकि 2024 में यह संख्या 799 तक पहुंच गई, जो कुल उम्मीदवारों का 9.5% है। पश्चिम बंगाल सबसे अधिक 11 महिला सांसदों के साथ इस मामले में आगे है। तृणमूल कांग्रेस के लोक सभा सांसदों में महिलाओं का अनुपात 38% है, जो राष्ट्रीय स्तर पर सर्वाधिक है।

राज्य विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व और भी कम है। राष्ट्रीय औसत मात्र 9% है, और किसी भी राज्य में यह 20% से अधिक नहीं है। छत्तीसगढ़, जो महिला प्रतिनिधित्व में सबसे आगे है, में भी केवल 18% महिला विधायक हैं। यह आंकड़े भारतीय राजनीति में लैंगिक असमानता को दर्शाते हैं। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में, संसद के निचले सदन में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मामले में भारत 185 देशों में से 143वें स्थान पर है। यह स्थिति स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि महिला सशक्तीकरण की दिशा में अभी और गंभीर प्रयासों की आवश्यकता है।

महिलाओं को राजनीति में सशक्त बनाने के लिए सरकार ने विभिन्न योजनाएं और नीतियां लागू की हैं। इनमें सबसे उल्लेखनीय संविधान (106वां संशोधन) अधिनियम, 2023 है, जिसे महिला आरक्षण अधिनियम, 2023 के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम के तहत लोक सभा, राज्य विधानसभाओं और दिल्ली की विधानसभा में महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटें आरक्षित करने का प्रावधान किया गया है। यह कदम महिलाओं को राजनीति में मुख्यधारा में लाने और उनके प्रतिनिधित्व को बढ़ाने का एक सुदृढ़ प्रयास है।

बिहार में महिला सशक्तीकरण के लिए विशेष प्रयास किये गए हैं। राज्य ने 2006 में पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को 50% आरक्षण दिया। इसके अलावा, 2007 में शहरी स्थानीय निकायों में भी महिलाओं के लिए 50% आरक्षण लागू किया गया। यह नीतिगत निर्णय महिलाओं को राजनीतिक मंच पर आने और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में भाग लेने के लिए प्रेरित करता है। संविधान के अनुच्छेद 243D के तहत, पंचायती राज संस्थाओं की एक तिहाई सीटें और अध्यक्ष पद महिलाओं के लिए आरक्षित हैं।

बिहार ने महिला रोजगार और शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। 2006 से महिलाओं को प्राथमिक शिक्षक भर्ती में 50% आरक्षण दिया जा रहा है, जबकि 2016 से सरकारी नौकरियों में उनके लिए 35% आरक्षण का प्रावधान है। राज्य में महिला पुलिसकर्मियों की भागीदारी देश में सबसे अधिक है। इसके अतिरिक्त, मेडिकल, इंजीनियरिंग और खेल विश्वविद्यालयों में छात्राओं के लिए 33% सीटें आरक्षित की गई हैं, जो एक अनूठी पहल है।

महिला सशक्तीकरण के आर्थिक पक्ष को मजबूत करने के लिए बिहार सरकार ने स्वयं सहायता समूहों को प्रोत्साहित किया है। जीविका परियोजना, जिसे राष्ट्रीय स्तर पर आजीविका कार्यक्रम के रूप में अपनाया गया है, महिलाओं को संगठित कर उनके आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त कर रही है। अब तक 10.47 लाख स्वयं सहायता समूह बनाए गए हैं, जिनमें 1.3 करोड़ से अधिक महिलाएं जुड़ी हैं। इन समूहों ने न केवल महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता दी है, बल्कि उन्हें सामाजिक रूप से भी सशक्त किया है। राजनीतिक सशक्तीकरण के साथ-साथ महिलाओं के लिए सामाजिक संरचना को बदलने की दिशा में भी बिहार ने सराहनीय कदम उठाए हैं। राज्य ने महिला पुलिस बटालियन की स्थापना की है, जो महिलाओं को सुरक्षा के क्षेत्र में अधिक सक्रिय भूमिका निभाने का अवसर प्रदान करती है।

राजनैतिक सशक्तीकरण का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में समान भागीदारी देना है। यह केवल प्रतिनिधित्व तक सीमित नहीं है; यह महिलाओं को नेतृत्व प्रदान करने, समाज में उनकी आवाज को मजबूत करने और लैंगिक समानता को बढ़ावा देने का एक माध्यम है। हालांकि, इन प्रयासों के बावजूद, कई चुनौतियां अभी भी बनी हुई हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाएं, महिलाओं के प्रति पारंपरिक दृष्टिकोण और संसाधनों की सीमित उपलब्धता महिलाओं के राजनीतिक सशक्तीकरण में बाधा बनती हैं।

अंत में, यह कहना उचित होगा कि भारत में महिला सशक्तीकरण की प्रक्रिया धीमी लेकिन प्रगतिशील है। सरकारी नीतियां और योजनाएं इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं, लेकिन समाज में लैंगिक समानता के लिए महिलाओं को राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज के हर क्षेत्र में समान अवसर और संसाधन प्रदान करना होगा। राजनैतिक सशक्तीकरण महिलाओं के सशक्तीकरण का एक महत्वपूर्ण आधार है और इसे मजबूत करना एक सशक्त और समतावादी समाज की नींव रखने के लिए अनिवार्य है।

भारत में महिला उद्यमिता: एक उभरती हुई प्रवृत्ति

भारत में महिला उद्यमिता ने हाल के वर्षों में उल्लेखनीय प्रगति की है। यह न केवल आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी को दर्शाता है, बल्कि समाज में व्यापक बदलाव का संकेत भी देता है। महिला श्रम बल भागीदारी दर, जो पहले 24.5% थी, अब बढ़कर 41.7% हो चुकी है। यह बदलाव महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक स्थिति में सुधार को दर्शाता है। इसके पीछे कई कारक जिम्मेदार हैं, जिनमें शैक्षिक सशक्तीकरण, सरकारी नीतियों का समर्थन, डिजिटल साक्षरता और समाज में बदलती धारणाएं प्रमुख हैं।

महिला उद्यमिता को प्रोत्साहन देने में सरकारी योजनाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना और स्टैंड-अप इंडिया जैसी योजनाओं ने महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान की है, जिससे वे अपने व्यवसाय स्थापित करने और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने में सक्षम हुई हैं। उदाहरण के लिए, मुद्रा योजना के तहत दिए गए 69% ऋण महिलाओं को मिले हैं, और स्टैंड-अप इंडिया योजना से 81% महिला उद्यमियों को सहायता प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त, डिजिटल प्लेटफॉर्म जैसे मीशो ने महिलाओं को अपने उत्पाद और सेवाएं बेचने के अवसर प्रदान किए हैं, जिससे उनकी व्यावसायिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है।

शैक्षिक सशक्तीकरण भी महिला उद्यमिता में वृद्धि का एक प्रमुख कारण है। उच्च शिक्षा में महिला नामांकन दर में लगातार वृद्धि हो रही है। 2015 में यह संख्या 1.57 करोड़ थी, जो 2022 में बढ़कर 2.07 करोड़ हो गई। यह 31.6% की वृद्धि दर्शाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने लैंगिक समावेशन और व्यावसायिक प्रशिक्षण पर जोर दिया है, जिससे ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में महिलाओं को शिक्षा और रोजगार के बेहतर अवसर मिल रहे हैं। केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों में महिला साक्षरता दर उच्च है, और इन क्षेत्रों में महिलाओं की कार्यबल भागीदारी अधिक देखी जाती है।

सुरक्षित और महिलाओं के अनुकूल बुनियादी ढाँचे का निर्माण भी इस बदलाव में सहायक रहा है। पिंक बसों और मेट्रो रेल जैसी परियोजनाओं ने महिलाओं के लिए यात्रा को आसान और सुरक्षित बनाया है। इसके अलावा, महिलाओं के अनुकूल कार्यस्थलों और क्रेच सुविधाओं की उपलब्धता ने कामकाजी महिलाओं के लिए परिस्थितियों को बेहतर बनाया है। कोविड-19 महामारी के दौरान डिजिटल अर्थव्यवस्था के विस्तार और दूरस्थ कार्य के प्रचलन ने भी महिलाओं को घर से काम करने और अपने व्यवसायों को संचालित करने का अवसर दिया है।

महिला उद्यमिता में वृद्धि के बावजूद, कई चुनौतियां अभी भी बरकरार हैं। वेतन भेदभाव एक प्रमुख समस्या है। आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार, महिलाओं की औसत मासिक आय 16,500 रुपए है, जबकि पुरुषों की 22,100 रुपए। स्वरोजगार में यह अंतर और भी अधिक स्पष्ट होता है। इसके अतिरिक्त, देखभाल अर्थव्यवस्था में महिलाओं के योगदान को अभी भी कम आंका जाता है। महिलाएं घर के काम और देखभाल की जिम्मेदारियों में अधिक समय देती हैं, जो GDP का लगभग 15-17% है। लेकिन यह काम अवैतनिक और अदृश्य बना हुआ है।

सुरक्षा संबंधी चिंताएं भी महिलाओं की आर्थिक भागीदारी में बाधा उत्पन्न करती हैं। सार्वजनिक परिवहन और कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न की घटनाएं महिलाओं के लिए गंभीर समस्या हैं। इसके अलावा, महिलाओं के पास वित्तीय संसाधनों तक पहुँच सीमित है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के अनुसार, महिलाओं के पास बैंक जमा का केवल 20.8% हिस्सा है। सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों में महिलाओं के नेतृत्व वाले उद्यमों को पर्याप्त ऋण नहीं मिल पाता, जिससे उनके व्यवसाय का विस्तार सीमित रह जाता है।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए सरकार ने कई पहलों की शुरुआत की है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के तहत महिला उद्यमियों को सस्ते ऋण प्रदान किये जाते हैं। बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ अभियान ने महिलाओं की शिक्षा और कल्याण को बढ़ावा दिया है। महिला ई-हाट जैसे ऑनलाइन विपणन मंच ने महिला उद्यमियों को अपने उत्पाद बेचने का अवसर प्रदान किया है। मातृत्व लाभ (संशोधन) अधिनियम, 2017 ने सवैतनिक मातृत्व अवकाश को बढ़ाकर 26 सप्ताह कर दिया है और कार्यस्थल पर क्रेच सुविधाओं को अनिवार्य बनाया है।

महिला उद्यमिता में वृद्धि सामाजिक और आर्थिक बदलाव का प्रतीक है। महिलाएं अब केवल घर की देखभाल तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे देश की आर्थिक वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। डिजिटल युग में, महिलाओं ने तकनीकी कौशल हासिल कर नए-नए क्षेत्रों में अपनी पहचान बनाई है। हालाँकि, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि महिलाएं समान अवसर प्राप्त करें। वेतन भेदभाव, सुरक्षा समस्याएं और वित्तीय संसाधनों तक पहुँच की कमी जैसी बाधाओं को दूर करना होगा। इसके अलावा, समाज में जागरूकता बढ़ाने और पितृसत्तात्मक सोच को बदलने की आवश्यकता है।

निष्कर्षत:, भारत में महिला उद्यमिता एक सकारात्मक प्रवृत्ति के रूप में उभर रही है, जो न केवल महिलाओं को सशक्त बना रही है, बल्कि समाज और देश की प्रगति में भी योगदान दे रही है। सरकारी योजनाओं, डिजिटल प्रौद्योगिकी और सामाजिक बदलाव के समन्वय से महिलाओं के लिए अधिक अवसर सृजित हो रहे हैं। हालाँकि, चुनौतियां अभी भी बनी हुई हैं, लेकिन अगर उन्हें प्रभावी तरीके से हल किया जाए, तो भारत में महिला उद्यमिता का भविष्य उज्ज्वल है।

आर्थिक विकास

काले धन की अर्थव्यवस्था अपराध और भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

"काले धन की विद्यमानता समाज के आर्थिक ढांचे को विकृत करती है और यह भ्रष्टाचार, अपराध, और असमानता को बढ़ावा देती है।" - ***मनोहर जोशी***

भारत जैसे विकासशील देश में काले धन (Black Money) की समस्या एक बड़ी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक चुनौती बन चुकी है। काला धन उस धन को कहते हैं जिसे वैध तरीके से अर्जित नहीं किया गया है और यह टैक्स से बचने के लिए या अवैध गतिविधियों के माध्यम से जमा किया जाता है। काले धन का उपयोग केवल निजी लाभ के लिए नहीं होता, बल्कि यह अपराध, भ्रष्टाचार और आर्थिक असमानता का प्रमुख कारण भी बनता है। इससे राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और समाज में अन्याय का वातावरण उत्पन्न होता है।

काले धन के स्रोत में आमतौर पर अवैध गतिविधियां, जैसे कि रिश्वतखोरी, तस्करी, नकली मुद्राएं, और काले बाजार के व्यापार शामिल होते हैं। जब यह धन सर्कुलेशन में आता है, तो यह कानूनी तरीके से अर्जित होने वाले धन की तुलना में राष्ट्र के वित्तीय तंत्र को नुकसान पहुंचाता है। इस पर विचार करते हुए, यह महत्वपूर्ण है कि हम अर्थव्यवस्था पर काले धन के प्रभाव को समझें, और यह समझें कि यह कैसे अपराध और भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है।

काले धन का अर्थव्यवस्था पर गहरा नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह समाज में आर्थिक असमानता को बढ़ाता है, क्योंकि अवैध रूप से अर्जित धन के संचय से आय और संपत्ति के वितरण में असंतुलन पैदा होता है। इसके कारण गरीब और निम्न-मध्यम वर्ग आर्थिक पिछड़ेपन का सामना करते हैं, जबकि काले धन के मालिक असंतुलित रूप से धन संचय करते हैं, जिससे समाज में असमानता और सामाजिक तनाव बढ़ता है। इसके अलावा, काले धन के कारण सरकार को भारी राजस्व हानि होती है, क्योंकि यह धन टैक्स प्रणाली से बचकर बाहर चला जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षा, स्वास्थ्य, और बुनियादी ढांचे जैसी सार्वजनिक योजनाओं के लिए धन की कमी हो जाती है, जिससे समाज का विकास बाधित होता है। काला धन अपराध को भी बढ़ावा देता है, क्योंकि इसका उपयोग माफिया, आतंकवाद और तस्करी जैसे अवैध कार्यों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, यह राजनीति में भ्रष्टाचार को बढ़ाता है, जिससे लोकतांत्रिक संस्थाओं की विश्वसनीयता घटती है।

काले धन और भ्रष्टाचार का आपसी संबंध भी गहरा है। काले धन का मुख्य स्रोत रिश्वतखोरी और घूस है, जो सरकारी अधिकारियों और संस्थानों द्वारा भ्रष्टाचार के रूप में सामने आता है। इससे न केवल जनता में असंतोष बढ़ता है, बल्कि सरकार की विश्वसनीयता भी कमजोर होती है। काले धन के कारण अर्थव्यवस्था में पारदर्शिता की कमी होती है, क्योंकि कर चोरी और संपत्ति छिपाने के कारण वित्तीय गतिविधियां अस्पष्ट हो जाती हैं। इससे न केवल आर्थिक योजनाओं का सही क्रियान्वयन प्रभावित होता है, बल्कि जनता का विश्वास भी घटता है। राजनीति में काले धन का उपयोग चुनाव अभियानों को प्रभावित करता है और राजनीतिक निर्णयों में भ्रष्टाचार को बढ़ावा देता है। इससे लोकतांत्रिक संस्थाएं कमजोर होती हैं और विकास की गति धीमी हो जाती है।

काले धन की समस्या से निपटने के लिए प्रभावी कदम उठाए जाने की आवश्यकता है। डिजिटल लेन-देन को बढ़ावा देना इस समस्या का एक प्रभावी समाधान हो सकता है, क्योंकि पारदर्शी भुगतान प्रणालियों से काले धन का उपयोग मुश्किल हो जाएगा। इसके लिए भारत सरकार ने डिजिटल इंडिया और कैशलेस अर्थव्यवस्था की दिशा में कदम उठाए हैं, लेकिन इसे और अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता है। काले धन के खिलाफ कठोर कानून बनाना भी आवश्यक है। सरकार को राजद्रोह विरोधी कानून, लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, और टैक्स चोरी से संबंधित कानूनों को सख्ती से लागू करना चाहिए।

इसके साथ ही, बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली में सख्त निगरानी जरूरी है। बैंकों को संदिग्ध गतिविधियों वाले खातों पर नजर रखनी चाहिए और आधार कार्ड, पैन कार्ड जैसी पहचान प्रणालियों के माध्यम से वित्तीय लेन-देन को पारदर्शी बनाना चाहिए। आर्थिक शिक्षा और जागरूकता फैलाना भी इस समस्या का एक महत्वपूर्ण समाधान है। लोगों को यह समझाना जरूरी है कि काले धन से समाज और अर्थव्यवस्था को किस तरह नुकसान पहुंचता है और यह उनके भविष्य को कैसे प्रभावित करता है। जागरूक और सशक्त नागरिक समाज काले धन की समस्या को हल करने में अहम भूमिका निभा सकता है। इन कदमों के माध्यम से काले धन की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता है और एक मजबूत, पारदर्शी, और टिकाऊ अर्थव्यवस्था का निर्माण किया जा सकता है।

काले धन का अस्तित्व किसी भी देश की अर्थव्यवस्था के लिए एक गंभीर खतरा है। यह न केवल आर्थिक असमानता और अपराध को बढ़ावा देता है, बल्कि भ्रष्टाचार के नेटवर्क को भी मजबूत करता है। काले धन का उपयोग कई अवैध गतिविधियों को बढ़ावा देता है, जो राष्ट्र की प्रगति में बाधक होते हैं। इससे निपटने के लिए सरकार को कड़े कानूनी कदम उठाने होंगे, बैंकिंग प्रणाली को पारदर्शी बनाना होगा, और समाज में जागरूकता बढ़ानी होगी। अगर हम काले धन की समस्या को ठीक से नियंत्रित कर सकें, तो यह अर्थव्यवस्था को और अधिक स्वस्थ, निष्पक्ष और समृद्ध बना सकता है।

कौशल अंतरः आर्थिक विकास में बाधा

"कौशल ही ताकत है, और ताकत से ही समाज और राष्ट्र का विकास होता है।" - ***डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम***

आर्थिक विकास में कुशल मानव संसाधन का अत्यंत महत्व है। जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी और उद्योगों में बदलाव हो रहे हैं, श्रमिकों के कौशल की मांग भी बढ़ रही है। हालांकि, वर्तमान में विकासशील देशों सहित कई देशों को "कौशल अंतर" (Skill Gap) की गंभीर समस्या का सामना करना पड़ रहा है। जब श्रमिकों के पास बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप कौशल नहीं होते, तो यह देश की आर्थिक प्रगति पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। कौशल अंतर आर्थिक विकास की गति को धीमा करने वाली एक प्रमुख बाधा बनकर उभरा है। इसका तात्पर्य श्रमिकों के कौशल और नौकरी के अवसरों की मांग के बीच की असमानता से है, जो तब उत्पन्न होती है जब श्रमिकों के पास वर्तमान श्रम बाजार की आवश्यकताओं के अनुसार कौशल नहीं होते।

इस समस्या के कई कारण हैं। सबसे पहला कारण है- शिक्षा और प्रशिक्षण की कमी। विशेष रूप से विकासशील देशों में, शिक्षा प्रणाली रोजगारोन्मुख नहीं है, और प्रशिक्षण की गुणवत्ता में असमानता देखने को मिलती है। इसके कारण विद्यार्थी अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद उपयुक्त नौकरी प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं। दूसरा कारण है तेजी से बदलती प्रौद्योगिकी। नई तकनीकों और कार्य विधियों के कारण कौशल की मांग तेजी से बदल रही है, लेकिन श्रमिक पुराने कौशल के साथ नए बदलावों का सामना करने में असमर्थ होते हैं। तीसरा कारण आर्थिक असमानता है, जिससे निम्न आय वर्ग के लोगों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और प्रशिक्षण की सुविधाएं नहीं मिल पातीं। इसके कारण उनका कौशल स्तर अन्य वर्गों की तुलना में कम रहता है।

कौशल अंतर का सीधा प्रभाव देश की आर्थिक वृद्धि और समृद्धि पर पड़ता है। जब श्रमिकों के पास काम करने के लिए आवश्यक कौशल नहीं होते, तो यह उत्पादन और उत्पादकता में गिरावट का कारण बनता है। इससे उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मकता घटती है और आर्थिक विकास बाधित होता है। कौशल अंतर बेरोजगारी को भी बढ़ावा देता है, क्योंकि योग्य श्रमिकों की कमी के कारण कंपनियां उपयुक्त उम्मीदवार नहीं ढूँढ़ पाती। इसके साथ ही, यह आर्थिक असमानता को बढ़ावा देता है, क्योंकि केवल कुछ विशेष कौशल वाले लोग ही उच्च वेतन वाली नौकरियों में स्थान प्राप्त कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त, कौशल अंतर के कारण सामाजिक और राजनीतिक असंतोष भी उत्पन्न होता है। बेरोजगारी और करियर के सीमित अवसरों से युवा पीढ़ी में असंतोष और अशांति फैलती है, जो समाज की स्थिरता को खतरे में डाल सकती है।

कौशल अंतर को कम करने के लिए कई उपाय किए जा सकते हैं। सबसे पहले, शिक्षा और प्रशिक्षण प्रणाली में सुधार आवश्यक है। शिक्षा प्रणाली में कौशल आधारित प्रशिक्षण को सम्मिलित करना और व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा को बढ़ावा देना इस दिशा में एक प्रभावी कदम हो सकता है। सरकारी और निजी क्षेत्र को मिलकर कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए। दूसरा, सार्वजनिक-निजी साझेदारी (PPP) के माध्यम से उद्योगों और सरकार के बीच सहयोग स्थापित किया जाना चाहिए, ताकि आवश्यकता आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किए जा सकें। तीसरा, तकनीकी शिक्षा में नवाचार को बढ़ावा देना चाहिए। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स, और डेटा साइंस जैसे नए तकनीकी क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान कर श्रमिकों को प्रतिस्पर्धात्मक बनाया जा सकता है। चौथा, सरकार को रोजगार सृजन के लिए नई नीतियां बनानी चाहिए और नए क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उत्पन्न करने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इससे श्रमिक अपने कौशल के अनुसार रोजगार प्राप्त कर सकेंगे और कौशल अंतर कम होगा।

भारत एक विकासशील देश है, जिसकी विशाल जनसंख्या और विविधता इसे विशिष्ट बनाती है। यहां की अर्थव्यवस्था तेजी से बढ़ रही है, लेकिन इसके बावजूद भारत में कौशल अंतर (Skill Gap) एक गंभीर समस्या बनी हुई है, जो आर्थिक विकास में एक बड़ी बाधा के रूप में उभर रही है। यदि इस कौशल अंतर को दूर नहीं किया गया, तो यह देश की समग्र विकास दर को धीमा कर सकता है।

भारत में तेजी से बढ़ती तकनीकी प्रगति, औद्योगिक विकास, और वैश्विक प्रतिस्पर्धा ने यह साबित कर दिया है कि कुशल श्रमिकों की आवश्यकता अब पहले से कहीं ज्यादा है। देश में रोजगार के अनेक अवसर उपलब्ध हैं, लेकिन श्रमिकों के पास उन्हें हासिल करने के लिए आवश्यक कौशल नहीं हैं। इसका परिणाम यह है कि लाखों युवा बेरोजगार हैं और कई उद्योगों को कुशल श्रमिकों की कमी का सामना करना पड़ रहा है।

कौशल अंतर न केवल व्यक्तिगत रोजगार की समस्या है, बल्कि यह एक देश के समग्र आर्थिक विकास को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है। इसके समाधान के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण, और नीति-निर्माण में सुधार की आवश्यकता है। सरकार, उद्योग और शैक्षिक संस्थानों को मिलकर काम करना होगा, ताकि श्रमिकों को आवश्यक कौशल प्रदान किया जा सके और वे वैश्विक प्रतिस्पर्धा में टिक सकें। यही एकमात्र रास्ता है जिससे हम कौशल अंतर को कम कर सकते हैं और अपने आर्थिक विकास को गति दे सकते हैं।

ग्रामीण विकास

कृषि व्यवस्था में सुधार कर देश के ग्रामीण अर्थतंत्र को सशक्त बना सकते हैं

(69वीं BPSC मुख्य परीक्षा)

"कृषि वह आधार है, जिस पर देश की संपूर्ण अर्थव्यवस्था खड़ी होती है। अगर कृषि व्यवस्था मजबूत होगी, तो ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी।" - *पंडित जवाहरलाल नेहरू*

भारत की अधिकांश आबादी आज भी कृषि क्षेत्र पर निर्भर है। कृषि न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा है, बल्कि यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था और ग्रामीण जीवन की आधारशिला भी है। हालांकि, भारतीय कृषि पिछले कुछ दशकों से कई समस्याओं का सामना कर रही है। भूमि का विभाजन, पुराने कृषि उपकरण, अत्यधिक बारिश और सूखा, न्यूनतम सरकारी समर्थन, और बिचौलियों की बढ़ती संख्या, जैसे मुद्दे कृषि क्षेत्र के समक्ष चुनौती बनकर खड़े हैं। ऐसे में, कृषि व्यवस्था में सुधार कर हम ग्रामीण अर्थतंत्र को सशक्त बना सकते हैं।

भारतीय कृषि को सशक्त बनाने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को प्रगति की ओर ले जाने के लिए कई सुधार आवश्यक हैं। उन्नत तकनीकी हस्तक्षेप के तहत उन्नत कृषि तकनीक और नवाचार का समावेश महत्वपूर्ण है। जीवाणु आधारित उर्वरक, स्मार्ट सिंचाई प्रणाली, संवर्धित बीज, और उच्च उत्पादकता वाले कृषि उपकरण किसानों को अधिक उपज लेने में सहायता प्रदान करते हैं। इसके अलावा, ड्रोन तकनीक, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), और बिग डेटा का उपयोग कृषि कार्यों को सटीक और प्रभावी बनाने में सहायक होता है।

कृषि उत्पादकता में सुधार के लिए प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर प्रबंधन और सतत कृषि को प्रोत्साहित करना आवश्यक है। जल प्रबंधन, मिट्टी की उर्वरता सुधार, और फसल चक्र का पालन जैसी सतत प्रथाएं अपनाने से पर्यावरण की सुरक्षा के साथ उत्पादन लागत भी कम की जा सकती है। इसके अलावा, किसानों को कम रासायनिक उर्वरकों और हानिकारक पद्धतियों से बचने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

कृषि से जुड़े बुनियादी ढांचे का सुधार भी कृषि व्यवस्था को मजबूत बनाने में सहायक है। सड़कों, गोदामों, और फसल भंडारण सुविधाओं का विकास किसानों की उपज को खराब होने से बचाता है और उन्हें उचित कीमत पर बाजार तक पहुंचाने में मदद करता है। वहीं, कृषि ऋण प्रणाली का सुदृढ़ीकरण किसानों को सस्ती और समय पर वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए आवश्यक है। सरकारी ऋण योजनाओं को और प्रभावी बनाना, माइक्रोफाइनेंस और सहकारी समितियों को प्रोत्साहित करना, और महाजनों से ऋण लेने की आवश्यकता को समाप्त करना इन सुधारों का हिस्सा होना चाहिए।

मूल्य समर्थन प्रणाली में सुधार कृषि उत्पादों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) को पारदर्शी और प्रभावी बनाने पर केंद्रित है। किसानों को उनकी उपज का सही मूल्य सुनिश्चित करने के लिए इस प्रणाली को मजबूत करना जरूरी है। इसके साथ, कृषि विपणन सुधार के माध्यम से ई-मार्केटिंग और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म्स का विकास बिचौलियों की भूमिका को समाप्त कर सकता है। इससे किसानों को अपनी उपज का अधिक लाभ मिल सकेगा।

कृषि बीमा योजनाओं का प्रचार-प्रसार प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम से निपटने के लिए अत्यंत आवश्यक है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना जैसी योजनाएं किसानों को वित्तीय सुरक्षा प्रदान करती हैं, जिससे वे बिना किसी डर के कृषि कार्य कर सकते हैं। इन योजनाओं के प्रति किसानों को जागरूक करना और बीमा प्रक्रिया को सरल बनाना अनिवार्य है।

कृषि सुधारों का ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर गहरा सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आर्थिक सशक्तीकरण के माध्यम से किसानों की आय बढ़ने से उनकी जीवनशैली में सुधार होता है और ग्रामीण क्षेत्र में समग्र आर्थिक प्रगति होती है। इसके अलावा, रोजगार के नए अवसर कृषि सुधारों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। कृषि यांत्रिकी, बागवानी, खाद्य प्रसंस्करण, और कृषि विज्ञान जैसे क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ते हैं, जिससे ग्रामीण युवाओं को नई संभावनाएं मिलती हैं।

समाज में समानता और विकास कृषि सुधारों का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू है। बेहतर उत्पादकता और बुनियादी ढांचे के विकास से समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्राप्त होते हैं। इससे ग्रामीण समाज में स्थिरता और विकास को प्रोत्साहन मिलता है। अंततः, सतत विकास का लक्ष्य संवर्धित कृषि तकनीकों, जल संरक्षण, और प्राकृतिक संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। ये सुधार किसानों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाते हैं और पर्यावरणीय संकटों से बचाव में भी सहायक होते हैं।

कृषि सुधार न केवल कृषि क्षेत्र की स्थिरता और उत्पादकता बढ़ाता है, बल्कि यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी मजबूत करता है। यदि सरकार और निजी क्षेत्र मिलकर कृषि व्यवस्था में सुधार करते हैं, तो ग्रामीण भारत में सकारात्मक बदलाव लाया जा सकता है। इन सुधारों से किसान की आय, सामाजिक समृद्धि, और आर्थिक स्थिरता में सुधार होगा, जो अंततः पूरे देश की समग्र अर्थव्यवस्था को सशक्त करेगा। एक सशक्त और आत्मनिर्भर ग्रामीण भारत ही एक सशक्त और प्रगतिशील राष्ट्र की आधारशिला रख सकता है। इसलिए, कृषि सुधार को प्राथमिकता देना समय की मांग है, जो भारत के आर्थिक और सामाजिक विकास के लक्ष्य को साकार करने की दिशा में एक बड़ा कदम होगा।